चन्दामामा
नवम्बर १९८१
RS 1.75

जीवन और हनु की वाह वाह

शताब्दियां बीत गयीं, पर खिलाड़ियों की समय के साथ होड़ जारी है। एक एथलीट का सर्वोत्तम प्रदर्शन सदा से ही सेकण्ड के सूक्ष्म भाग तथा एकाग्रता पर निर्भर करता है। फिर भी, कुछ खिलाड़ियों ने समय से लोहा लिया है और अधिक उम्र होने पर भी पिछले रिकार्डों को तोड़ कर दिखाया है।

ओलम्पिक प्रतियोगिताओं में सबसे लम्बा कैरियर ४० वर्ष तक का रहा है। फेंसिंग प्रतियोगिता के लिए यह रिकार्ड डेनमार्क के डा. ईवान ओजियर (१८८८-१९६५) के नाम पर है जिन्होंने इस प्रतियोगिता में १९०८, १९१२, १९२०, १९२४, १९२८ और १९३२ में रिकार्ड संख्या में भाग लिया। उस समय तक उनकी आयु ६० वर्ष हो गई थी।

एक अन्य सदा-बहार एथलीट ईथोपिया का लम्बी दूरी का धावक मिरूटस ईफ्टर है। उसने जो कीर्तिमान बनाया है उसे कोई धावक इससे पहले नहीं बना पाया था. ५,००० और १०,००० मीटर की दौड़ें ३६ वर्ष की आयु (उसे अच्छी तरह याद नहीं है, आयु ज्यादा भी हो सकती है) में जीतीं यह प्रदर्शन १९८० के मास्को ओलम्पिक की विशिष्ट उपलब्धियों में से था।
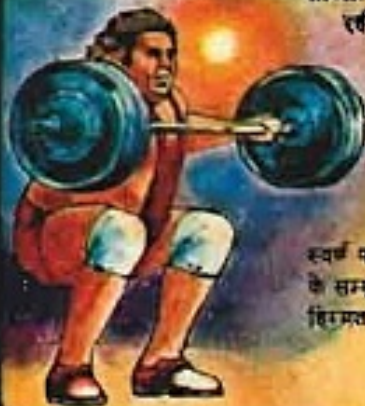
शारलो डोड (१८७१-१९६०) जीवन भर किसी न किसी खेल में सफलता प्राप्त करती रही: उसने ५ बार विम्बलडन सिंगल प्रतियोगिता जीती, इंग्लैंड की महिला गोल्फ चैम्पियन बनी, धनुर्विद्या में ओलम्पिक में रजत पदक जीता और हाकी में इंग्लैंड का प्रतिनिधित्व किया।

१० वर्षों तक सुपर हैवी-वेट प्रतियोगिताएं जीतते रहने का गौरव रूस के महामानव वासिली एलक्सियेव को है। उसने ८० रिकार्ड तोड़े और २ बार ओलम्पिक स्वर्ण पदक जीता। १९८० में उसे जरूर नवयुवक प्रतिद्वन्दी के सम्मुख हार स्वीकार करनी पड़ी, पर उसने कभी हिम्मत नहीं छोड़ी है।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित बनाने का सबसे ठोस तरीका है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय
जीवन बीमा निगम

अगली बार: जीवन और हनु का निष्कर्ष—स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा धन है।

तितली रानी, तितली रानी, आओ हमारे संग
बाग़ हमारा देखो, देखो फूलों के रंग
पंखों पर तुम्हारे हम जॅम्स सजाएँगे
आज तुमको जॅम्स की तितली बनाएँगे
GEMS
कितनी मधुर कल्पना,
झट ले आओ जॅम्स अपना!
कॅडबरिज़
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे, मीठी मीठी कल्पनाओं जैसे!
OBM/6642:HN
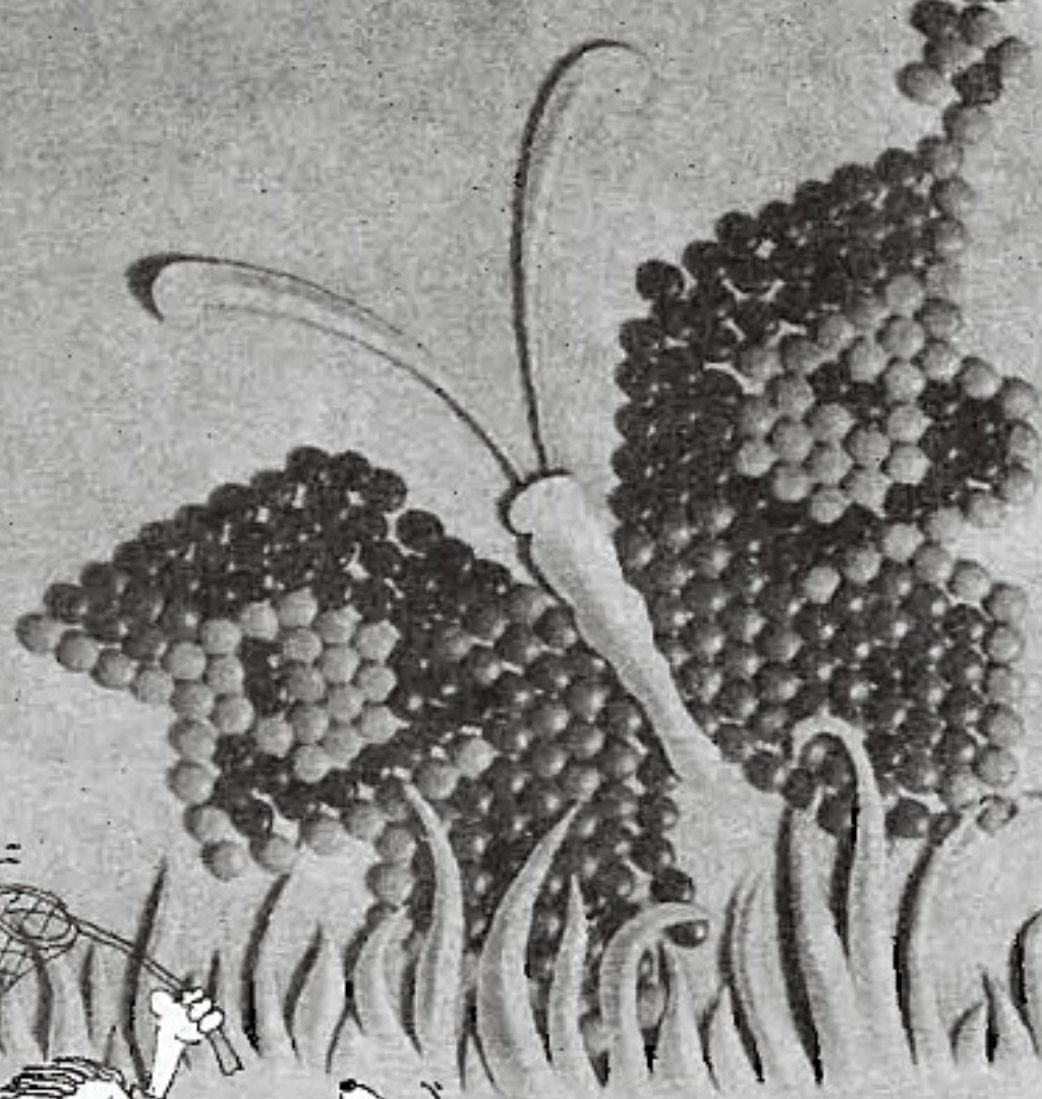
चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०
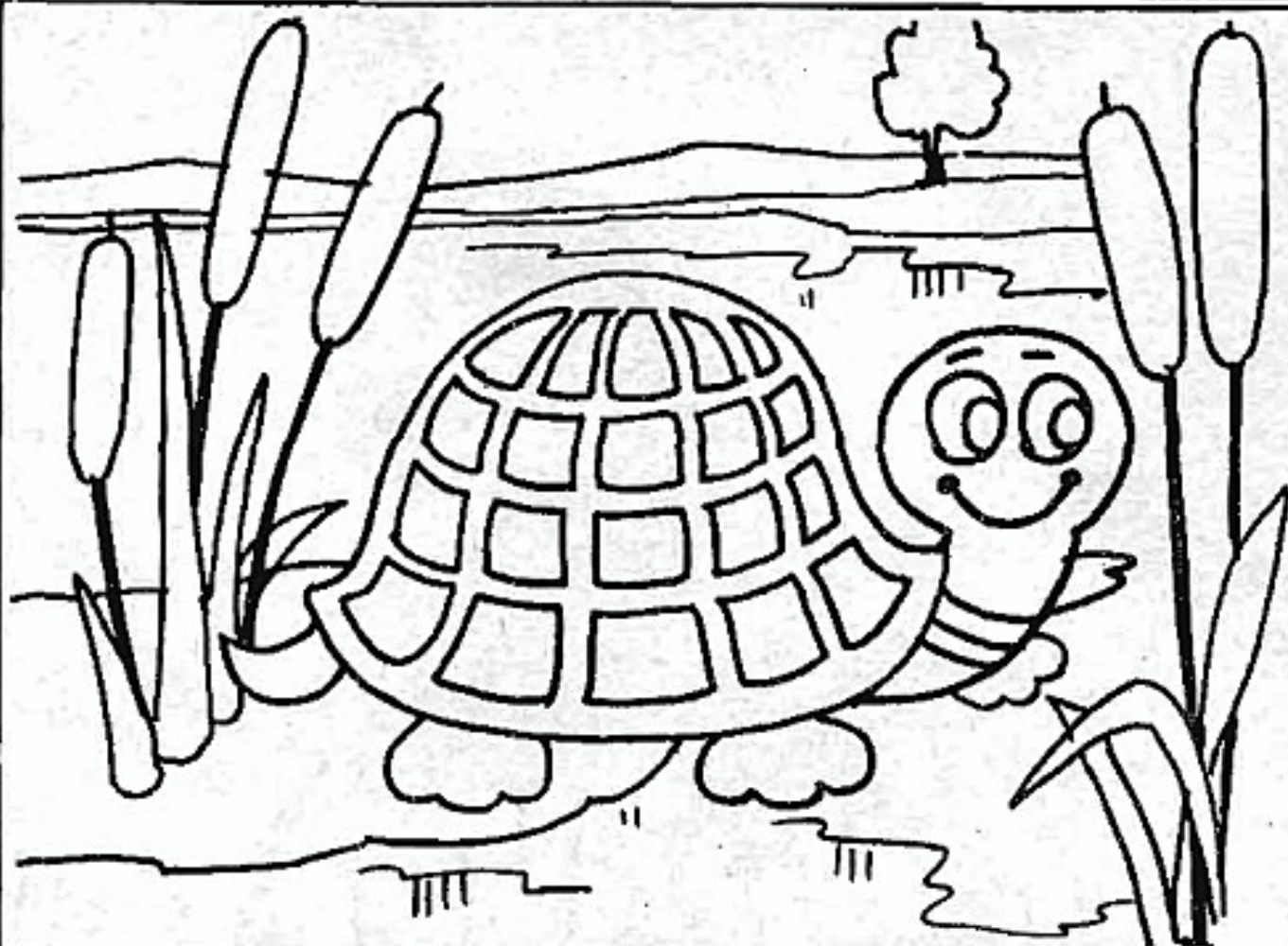
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................

Address...

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO 22

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: *30-11-1981*

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "मंत्री की सलाह" राजनीति की गुत्थियों को सुलझाने का एक उत्तम उदाहरण है। "चमत्कार का सत्कार" हमें यह शिक्षा देती है कि बड़े से बड़े विद्वान के लिए भी राज दरबार में स्थिरता को प्राप्त पंडितों की अड़चनों को हटाकर प्रवेश पाना कितना कठिन है।

अमर वाणी

विकृति नैव गच्छंति संगदोषेण साधव: ।
आवेष्टितं महासर्पै: चंदनं न विषायते ।।

[दुष्टों की संगति से उत्तम व्यक्तियों में बुरे गुण नहीं आते, जैसे चंदन के वृक्षों से जहरीले साँपों के लिपटे रहने पर भी उस पर जहर का असर नहीं होता।]

वर्ष : ३४ नवंबर १९८१ अंक : ३

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

सही तरीका

नारायणदास की पत्नी का नाम चाहे कुछ भी रहा हो, पर सब लोग उसे नारायणी पुकारते हैं। क्योंकि वह भी अपने पति के जैसे अव्वल दर्जे की कंजूस है। उन दंपति के पड़ोस में कृष्णदास और कृष्णवेणी नामक दंपति रहा करते थे। लेकिन इनका व्यवहार नारायणदास दंपति के व्यवहार से बिलकुल भिन्न था। वे दोनों दयालू थे।

नारायणदास महाजनी किया करता था। उसकी अच्छी-खासी आमदनी हो जाती थी, लेकिन एक पाई भी खर्च करने से वह घबड़ा जाता था। उसके पिछवाड़े में फलों के कई पेड़ थे। पर वह एक भी फल पड़ोसियों को देता न था। सारे फल वे ही लोग खा जाते थे। नारायणदास के घर में कभी एकाध बार रसोई बनती थी। अगर कोई उन्हें खाने पर बुलाते, तो झट से उनके घर पहुँच जाते और भर पेट खाकर लौट आते थे।

एक दिन नारायणदास अपने घर के पिछवाड़े में टहल रहा था, तब उसने देखा कि उसके पेड़ का एक फल पड़ोसी के अहाते में जा गिरा। इसे देखते ही नारायणदास दीवार फांदकर पड़ोसी के पिछवाड़े में पहुँच गया। उसे फल के साथ पड़ोसी के पिछवाड़े में रसोई घर के किवाड़ खुले हुए दिखाई दिये। वह यह सोचकर किवाड़ तक पहुँचा कि शायद पड़ोसी अभी तक सोये न हों, थोड़ी देर गपशप लड़ाकर वापस चले, पर रसोई घर में कोई न थे, मगर रसोई की खुशबू चारों ओर फैल रही थी। इस पर नारायणदास झट से भीतर घुस पड़ा। वह जल्दी-जल्दी रसोई की सारी सामग्री अपनी धोती में बांधकर फल के साथ दीवार

फांदकर अपने पिछवाड़े में आ पहुँचा। नारायणदास की इस होशियारी की उसकी पत्नी ने खूब तारीफ़ की। उस रात को दोनों ने मजे से दावत उड़ाई।

दूसरे दिन नारायणदास दपंति ने सोचा कि पड़ोसी कृष्णदास हो-हल्ला मचायेगा, लेकिन ऐसी कोई बात न हुई।

"उफ़! हमारे पड़ोसी एकदम लापरवाह हैं, सारी रसोई के गायब हो जाने पर उन लोगों ने चूँ तक नहीं की।" नारायणदास ने कहा।

"ऐसे लोगों के घर से रोज खाना उठा लावे तो भी वे चिंता न करेंगे।" नारायणी ने हामी भर दी।

बस, फिर क्या था। उस दिन रात को भी नारायणदास दीवार फांदकर पड़ोसी के पिछवाड़े में पहुँचा। मगर उस दिन रसोई घर के किवाड़ बंद थे। नारायणदास ने थोड़ा सा धक्का दिया। इस पर किवाड़ की चटकनी बिना आहट के खुल गई। उस दिन भी नारायणदास खाने-पीने का सारा सामान उठा ले आया।

तीसरे दिन नारायणदास दीवार फांद कर जब रसोई घर में पहुँचा, तब वह देखता क्या है, वहाँ पर रसोई की सामग्री के साथ दो पीढ़े लगाये गये हैं, और उनके सामने दो पत्तल बिछाये गये हैं।

नारायणदास ने सोचा कि उसकी करनी का पता कृष्णदास को लग गया है। फिर उसने यह निश्चय किया, चाहे जो हो उसका सामना किया जा सकता है, तब रसोई की सारी सामग्री पत्तलों में बांध कर अपने घर ले गया।

दूसरे दिन कृष्णदास के घर के सामने बड़ी भीड़ लगी। इसका कारण जानने के ख्याल से नारायणदास वहाँ पहुँचा।

कृष्णदास भीड़ को संबोधितकर कह रहा था—"हमारे घर रोज भगवान आकर खाना खाकर चले जा रहे हैं। पहले दिन रसोई बच गई तो भगवान ने खा लिया। मैंने सोचा, शायद कुत्ते ने खा

लिया होगा। दूसरे दिन भी हमारे घर रसोई ज़रूरत से ज्यादा बनी, उस दिन हमने रसोई घर के किवाड़ बंद किये, फिर भी रसोई गायब हो गई। यह काम कुत्ते का है या भगवान का है, इस बात का पता लगाने के लिए हमने तीसरे दिन पत्तल भी लगाये। पर इस बार पत्तलों के साथ रसोई गायब हो गई। तब तो यह काम अवश्य भगवान का ही होना चाहिए न?"

भीड़ ने कृष्णदास की बात का समर्थन किया। इस विचित्र दृश्य को देखने के लिए रोज कृष्णदास के पिछवाड़े में जमा होने लगे। एक हफ़्ता बीतने पर भी भगवान उस ओर झांके तक नहीं। इस पर कृष्णदास ने कहा—"कहीं भगवान इतने सारे लोगों के सामने आ जायेंगे। उनको तो गुप्त रूप से देखना होगा!"

उस दिन से लोग गुप्त रूप से देखने लगे। बेचारे, नारायणदास को यह बात अड़चन मालूम होने लगी। कृष्णदास भोला-भाला था, इसलिए उसने सोचा कि भगवान आ करके उसकी रसोई खा रहे हैं! यह बात तो सही है। लेकिन सभी लोग जब इसका पहरा दे रहे हैं, तब नारायणदास कृष्णदास के घर का खाना कैसे उड़ा सकता है? उसे कैसे मालूम होगा कि भगवान के पधारने के रास्ते की ओर कौन कमबख्त हज़ार आँखों से देखते ताक में बैठा है।

इस प्रचार को बंद कराने के विचार से नारायणदास ने कपनी पत्नी को प्रोत्साहित कर कृष्णवेणी के पास भेजा। नारायणी ने कृष्णवेणी को समझाया— "भाभीजी, रोज भगवान आकर जब तुम्हारे घर खाना खाकर जा रहे हैं, तो इस बात को भाई साहब ने गाँव भर में फैलाया, इस पर भगवान ने आना ही बंद कर दिया। इधर भाई साहब भी लोगों की नजरों में बावरे कहलाये।"

"मेरे पति वैसे बावरे नहीं हैं; बस, वे तो बड़े ही दयालू हैं।" कृष्णवेणी ने शांत स्वर में समझाया।

"मतलब?" नारायणी ने अचरज में आकर पूछा।

"वे जानते हैं कि रसोई उड़ाने वाले व्यक्ति भगवान नहीं हैं, कोई मनुष्य ही है। लेकिन इस तरह गुप्त रूप में आकर वह खाना खा जाता है, तो हम अनुमान लगा सकते हैं कि वह खाने के लिए कैसे तरस रहा है। ऐसा व्यक्ति कोई जन्मजात दरिद्र या कंगाल होगा! मेरे पति बताते हैं कि भूखे को खाना खिलाना भगवान को खिलाने के समान है। इसीलिए हमने पत्तल भी लगाकर उसके खाने का इंतजाम भी कर लिया है।" कृष्णवेणी ने समझाया।

"यह बात सही है कि तुम्हारे पति बड़े ही दयालू हैं, लेकिन तुम्हारे मन में यह विचार न आया कि रसोई में घुसकर खाना

खाने वाला व्यक्ति जन्मजात दरिद्र न होकर संपन्न भी हो सकता है!" नारायणी ने पूछा।

नारायणी का ख्याल था कि उनकी यह करनी कृष्णवेणी पर प्रकट हो गई हो तो इस सवाल के द्वारा उसका पता लग सकता है।

"अगर वह संपन्न परिवार का है तो इस तरह लुके-छिपे आकर खाना खा जाना शर्म की बात नहीं है? उसका यह काम प्रकट हो जाएगा तो वह लोगों के बीच कैसे अपमानित हो जाएगा! इसीलिए मेरे पति सबके सामने उसका अपमान कराना नहीं चाहते, मैंने बताया है न कि वे बड़े दयालू हैं? इसीलिए वे भगवान का नाम ले रहे हैं!" कृष्णवेणी ने कहा।

"ऐसी हालत में यह सारा प्रचार ही क्यों? जो आदमी लुक-छिपकर खाना खा जाता था, इस प्रचार की वजह से उसने आना बंद किया। तुम्हारे घर के पिछवाड़े की निगरानी भगवान को देखने के ख्याल से हमेशा कोई न कोई रखता होगा। इस डर से उसने खाने के लिए आना बंद कर दिया होगा!" नारायणी ने पूछा।

"नारायणी, वास्तव में हम तो यही चाहते हैं। हम्हीं लोग रसोई घर में छिपे रहकर उस मनुष्य का पता लगा सकते हैं! लेकिन अगर वह कहीं हमारा पड़ोसी या सामने के मकान वाला हो तो उसे डांटकर उसका अपमान तो नहीं कर सकते हैं न? इसलिए गुप्त रूप से आकर अपनी लाज-शर्म का ख्याल किये बिना खाना खाने की आदत को बंद कराने के लिए हमने यह सही तरीका चुन लिया है। तुम्हारा क्या विचार है?" कृष्णवेणी ने कहा।

नारायणी समझ गई कि कृष्णदास दंपति पर उनका रहस्य प्रकट हो गया है, पर उनकी इस बुरी आदत को छुड़ाने के लिए एक सही तरीका अपना लिया है।

इसके बाद नारायणी ने अपने घर लौट कर सारी बातें अपने पति को सुनाई, उस दिन से नारायणदास दंपति की कंजूसी धीरे-धीरे कम होती गई।

[१८]

[शिथिल गृह से भागने वाले व्याघ्रदत्त तथा समरसेन के सामने अचानक एकाक्षी मांत्रिक आ धमका। लेकिन व्याघ्रदत्त को धोखा देकर समरसेन एकाक्षी मांत्रिक की आँख बचा कर भाग गया। एकाक्षी मांत्रिक के मन में यह विश्वास जम गया कि अपने शत्रु पक्ष के समरसेन का अंत करना हो तो व्याघ्रदत्त सब तरह से उसकी मदद कर सकता है। बाद—]

व्याघ्रदत्त का जवाब पाने पर सारी हालत एकाक्षी मांत्रिक की समझ में आ गई। उसने भांप लिया कि उसी के जैसे वह भी धन के ढ़ेरों से भरी नाव पर क़ब्जा करने की कोशिश कर रहा है। इस पर एकाक्षी ने पूछा—"व्याघ्रदत्त, क्या तुम यह बात नहीं जानते कि धन के ढेरों से भरी नाव पर क़ब्जा करना मानव मात्र के लिए संभव नहीं है?"

व्याघ्रदत्त ने सर हिलाते हुए उत्तर दिया—"शाक्तेय का त्रिशूल जो है!"

शाक्तेय के त्रिशूल का नाम सुनते ही एकाक्षी मांत्रिक चकित रह गया। उसका विश्वास था कि यह बात सिर्फ़ वह और चतुर्नेत्र ही जानते हैं!

इसके बाद व्याघ्रदत्त ने जान के डर से एकाक्षी मांत्रिक को बताया कि वह त्रिशूल शिथिलनगर के हाथी वन में

गुरुद्रोही के कंकाल के नीचे सुरक्षित है! जब व्याघ्रदत्त ने यह भी बताया कि शिवदत्त उस त्रिशूल को पाने का प्रयत्न कर रहा है और समरसेन भी वहीं पर पहुँच गया होगा। तब एकाक्षी मांत्रिक क्रोध के मारे कांप उठा। वह बोला– "व्याघ्रदत्त! इस कार्य को साधने के लिए हमें एक-दूसरे की मदद करनी होगी। इस कार्य में चतुर्नेत्र नामक एक तुच्छ मांत्रिक समरसेन की मदद कर सकता है! इसलिए उन लोगों के पहले ही वहाँ पहुँच कर शाक्तेय के त्रिशूल को हस्तगत कर लेना हमें ज्यादा मुनासिब होगा! तुम आगे रहकर उसका रास्ता दिखला दो।"

थोड़ी दूर जाने पर एकाक्षी मांत्रिक ने अपने भेदियों की ओर नज़र दौड़ाकर आदेश दिया–"हे कपाल और कालभुजंग! तुम लोग पहले जाकर समरसेन का पता लगा लो।"

भेदियों के चले जाने के थोड़ी देर बाद काले उलूक की कर्कश ध्वनि सुनाई दी जिससे व्याघ्रदत्त और एकाक्षी मांत्रिक चौंक पड़े। उलूक एकाक्षी मांत्रिक के सर पर मंडराते हुए चिल्लाने लगा– "चतुर्नेत्रजी! यहाँ पर एकाक्षी मांत्रिक है।"

एकाक्षी मांत्रिक डर के मारे कांपते हुए बायें हाथ से अपनी आँख मूंदकर दायें हाथ से हवा में तलवार घुमाते हुए पुकार उठा–"हे मेरे कपाल! हे मेरे काल भुजंग!"

मगर एकाक्षी मांत्रिक के कई बार चिल्लाने पर भी वहाँ पर उसके भेदिये नहीं आये। वह सोच ही रहा था कि क्या किया जाय, इस बीच काला उल्लू उड़कर कहीं चला गया। इसके बाद व्याघ्रदत्त और एकाक्षी मांत्रिक हाथी वन में पहुँचे। तब व्याघ्रदत्त बोला–"एकाक्षी महाशय, यही हाथी वन है! फन फैलाकर फुफकारने वाले सांपों जैसे पत्तोंवाला पेड़ ही विषवृक्ष है! सामने दीखनेवाली समाधि के नीचे शाक्तेय का त्रिशूल है!"

ये बातें सुन एकाक्षी मांत्रिक परमानंदित होकर बोला–"व्याघ्रदत्त! लो, हमारी तरफ़ बढ़कर चले आनेवाले शिवदत्त का तुम लोग सामना करो। इस बीच त्रिशूल पाने का उपाय में करूँगा।" इन शब्दों के साथ एकाक्षी मांत्रिक ने व्याघ्रदत्त को प्रोत्साहित किया।

व्याघ्रदत्त ने आगे-पीछे की बात सोचे बिना अपने मुट्ठी भर अनुचरों के साथ शिवदत्त के अनुचरों पर हमला बोल दिया।

शिवदत्त के अनुचर संख्या में व्याघ्रदत्त के अनुचरों से तिगुने थे। इस वजह से व्याघ्रदत्त के अनुचर एक-एक करके जमीन पर लोटने लगे।

इस हालत में एकाक्षी मांत्रिक ने अपने ऊपर होने वाले खतरे को भांप लिया। दूसरे ही क्षण वह उच्च स्वर में पुकार उठा–"कपाल! काल भुजंग! सावधान हो जाओ!" दूसरे ही पल में कपाल और काल भुजंग उसके सामने हाज़िर हुए।

उन्हें देख शिवदत्त के अनुचर मारे डर के भागने लगे। उस समय एकाक्षी मांत्रिक ने कहा–"व्याघ्रदत्त! हमारे लिए यही एक अच्छा मौक़ा है! तुम अपने अनुचरों के साथ त्रिशूल वाली समाधि को खुदवा डालो।"

व्याघ्रदत्त को भी लगा कि अब उसकी विजय निश्चित है। क्योंकि समरसेन और चतुर्नेत्र के वहाँ पर पहुँचने के पहले ही

नरवानर व्याघ्रदत्त को अपने हाथों में कस कर घुमा रहा है। काला उल्लू एकाक्षी को पुकारते विष वृक्ष की ओर बढ़ा चला आ रहा है।

उस दृश्य को देख एकाक्षी घबरा गया। उसे इस बात का डर सताने लगा कि उसके द्वारा शाक्तेय के त्रिशूल पर क़ब्जा करने के पहले ही चतुर्नेत्र तथा अपने अनुचरों के साथ समरसेन भी पहुँच सकते हैं! तब उसने कालभुजंग को पुकार कर उसे नरवानर पर हमला करने को उकसाया। नरवानर व्याघ्रदत्त को दूर के पहाड़ पर फेंककर काल भुजंग के साथ जूझ पड़ा। आसमान में काला उल्लू और कपाल भयंकर रूप से लड़ने लगे।

एकाक्षी मांत्रिक जिस बात से डर रहा था, वह सच होकर निकला। चतुर्नेत्र उलूक और नरवानर को पुकारते हुए वहाँ पर आ पहुँचा। समरसेन के साथ कुछ सैनिक थे। भागने वाले शिवदत्त और उसके अनुचर भी संभलकर फिर उस प्रदेश में लौटने लगे। व्याघ्रदत्त के बचे हुए सैनिक उन लोगों का सामना करने लगे।

कालभुजंग के विषैले दाढ़ों के वार से बचते हुए नरवानर उस पर पत्थर वाला गदा चलाने लगा। काला उल्लू भी

वह उन दिव्य शक्तियों वाले त्रिशूल पर क़ब्जा कर सकता है। यों विचार कर अपने अनुचरों को चेतावनी देकर वह खुद आगे बढ़ा और मृत वीरों की समाधि को खोदने लगा। इस बीच उसे सौ गज की दूरी पर स्थित विष वृक्ष से कराहटें सुनाई देनी लगीं। फन की आकृति वाले विष वृक्ष के पत्ते फुत्कारने लगे।

उसी वक़्त एकाक्षी मांत्रिक विष वृक्ष के समीप पहुँचा। अपने हाथ की तलवार उठाकर वह कोई मंत्र पढ़ने लगा। तभी उसे व्याघ्रदत्त की हृदय विदारक पुकार सुनाई दी। इस पर एकाक्षी मांत्रिक ने पीछे मुड़कर देखा, चतुर्नेत्र का भेदिया

कपाल के पोपले मुँह से बचकर अपने पैरों से लात मारते उस पर अपनी चोंच चलाने लगा।

एकाक्षी मांत्रिक ने समझ लिया कि उसकी हालत खतरे से खाली नहीं है। इस पर दुस्साहस के साथ तलवार खींचकर चतुर्नेत्र पर हमला कर बैठा। चतुर्नेत्र भी हिम्मत के साथ एकाक्षी से जूझ पड़ा। इस बीच चतुर्नेत्र की सलाह के अनुसार समरसेन अपने सैनिकों की मदद से समाधि खोदने लगा।

मृत वीरों की समाधि को खोदने वाले समरसेन को भीतर से विचित्र चिल्लाहटें और कहकहियाँ भी सुनाई देने लगीं।

समरसेन थोड़ा भी विचलित न हुआ! उसके सैनिकों ने निडरता के साथ समाधि को खोद डाला।

समाधि के भीतर एक ही कंकाल दिखाई दिया। समरसेन ने सोचा कि वह गुरुद्रोही का ही कंकाल हो सकता है। उस कंकाल के कलेजे पर शाक्तेय का त्रिशूल चुभा हुआ था। अपने कांपने वाले हाथों से समरसेन ने त्रिशूल को कंकाल से बाहर खींच लिया। दूसरे ही क्षण कंकाल आसमान में उड़कर बोला—"गुरु शाक्तेय! आज से मैं शाप से मुक्त हो चुका हूँ। मैं फिर से शमन द्वीप में
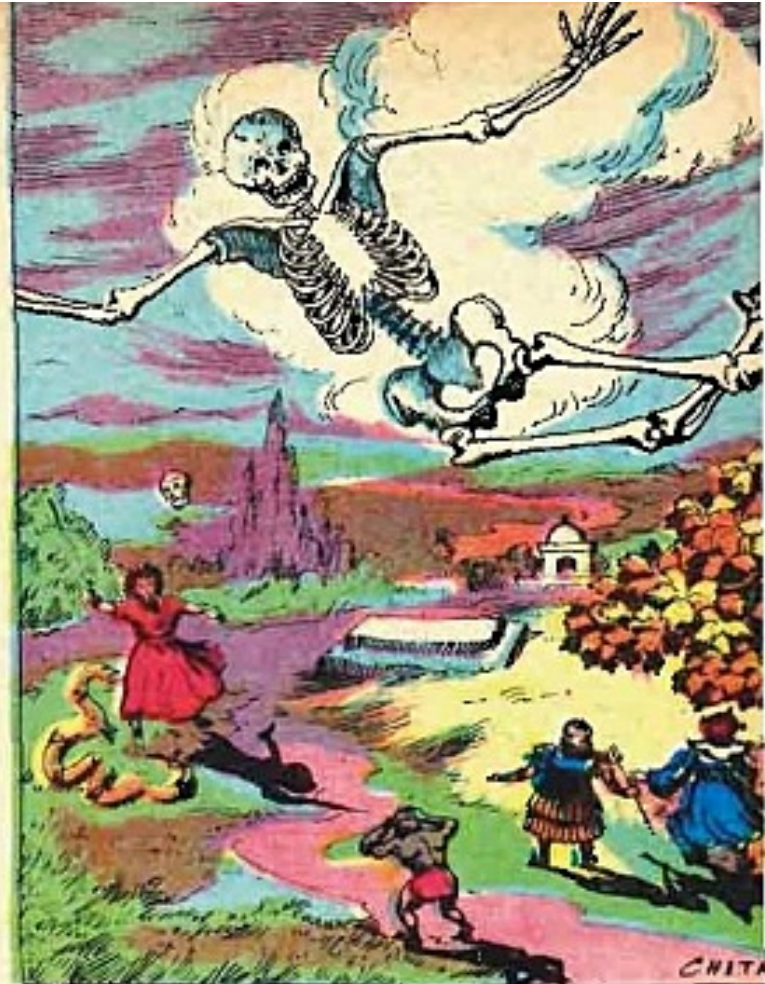
जा रहा हूँ।" यों कहकर आसमान में उड़ता चला गया।

कंकाल के मुँह से ये शब्द सुनने पर हाथी बन में रहने वाले सभी लोगों के कलेजे कांप उठे। एकाक्षी मांत्रिक अपनी तलवार को बीच में ही रोककर आसमान में उड़ने वाले गुरुद्रोही के कंकाल की ओर एकटक देखने लगा। समरसेन चतुर्नेत्र के पास पहुँचा और त्रिशूल को उसके हाथ सौंप दिया।

एकाक्षी ने कंकाल की तरफ़ से अपनी दृष्टि हटाकर ज्यों ही चतुर्नेत्र की ओर दौड़ाई, त्यों ही वह देखता क्या है, चतुर्नेत्र के हाथ में शाक्तेय का चमकने वाला

CHITRA

त्रिशूल दिखाई दिया । तत्काल वह चीख कर कपाल और काल भुजंग को चेतावनी दे भगाने लगा ।

उसी वक़्त समरसेन ने कहा—"चतुर्नेत्र! उस पापी को प्राणों के साथ भागने न दो!"

चतुर्नेत्र समरसेन की बातें सुन हँसकर बोला—"समरसेन! अब एकाक्षी कहीं भी भाग नहीं सकता । हम जब चाहे, तब—यह त्रिशूल—चाहे एकाक्षी जहाँ भी छिपा क्यों न हो, जाकर उसका अंत कर सकता है ।" यों कहकर चतुर्नेत्र ने त्रिशूल को उसकी ओर फेंकते हुए आदेश दिया—"तुम अभी उस गुरुद्रोही के छोटे भाई एकाक्षी का अंत करके लौट आओ ।"

उसी वक़्त त्रिशूल बिजली की भांति हवा में उड़ा, तेजी से जाकर भागने वाले एकाक्षी के समीप पहुँचा और उसके कलेजे में चुभ गया । इसके बाद त्रिशूल लौट कर चतुर्नेत्र के चरणों के पास आ गिरा ।

इस पर उत्साह में आकर समरसेन बोला—"चतुर्नेत्र! बचे हुए उन कपाल और कालभुजंग का भी अंत कर डालो ।"

चतुर्नेत्र ने कहा—"एकाक्षी के मरने के बाद उसके अनुचर कपाल और कालभुजंग किसी प्रकार से किसी की भी हानि नहीं कर सकते ।" इसके बाद पल भर रुककर

चतुर्नेत्र बोला—"समरसेन, अब हमें नाहक़ वक़्त बरबाद नहीं करना है । तुरंत पूर्वी तट पर पहुँचकर धन के ढेरों से भरी नाव पर क़ब्जा करना है ।"

फिर सभी लोग जंगल के रास्ते तथा पहाड़ी घाटियों की पगडंडियों पर चलकर दूसरे दिन शाम तक पूर्वी समुद्र तट पर पहुँचे । समुद्र पर धन के ढेरों से लदी नाव तथा उसका पहरा देने वाली नाग कन्या उन्हें दिखाई दीं ।

चतुर्नेत्र ने अपूर्व शक्तियों वाले शाक्तेय के त्रिशुल पर मंत्र फूंककर उसे नाव की ओर फेंक दिया । त्रिशूल बिजली की गति के साथ जाकर नाव को छुआ ।

दूसरे ही क्षण पतवार चलाकर नागकन्या ने नाव को समुद्र तट पर लगा दिया ।

इस पर चतुर्नेत्र ने नागकन्या से कहा– "मैं शमन द्वीप के राजा शाक्तेय का शिष्य हूँ । मेरा नाम चतुर्नेत्र है । यह उनका त्रिशूल मंत्र-शक्ति वाला अस्त्र है । तुम गुरुजी की आज्ञा को जानती हो न? इसलिए तुम मेरी पत्नी हो ।"

ये बातें सुनते ही नागकन्या पतवार को छोड़कर आगे आई और चतुर्नेत्र को उसने प्रणाम किया । इस पर समरसेन तथा उसके सैनिकों ने उत्साह में आकर जयकार किये ।

चतुर्नेत्र ने समरसेन की ओर मुड़कर कहा–"समरसेन, आज से मैं और यह नाग कन्या हम दोनों पति-पत्नी हैं । हम इस मांत्रिक द्वीप में शांति के साथ अपना समय बिताना चाहते हैं । तुम जिस काम से आये थे, वह सफलता पूर्वक संपन्न हुआ । अब तुम नाव में भरे इन धन के ढेरों के साथ कुंडलिनी द्वीप में जा सकते हो !"

उसी वक्त समरसेन ने अपनी यात्रा की तैयारियाँ कीं । उसने चतुर्नेत्र के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की । चतुर्नेत्र समरसेन को आशीर्वाद देकर अपनी पत्नी नागकन्या को साथ ले जंगल की ओर चला गया ।

शिवदत्त तथा उसके अनुचरों ने भी यह निश्चय किया कि भूकंप तथा भयंकर वन्य मृगों से भरा मांत्रिक द्वीप उनके लिए निवास करने योग्य नहीं है । इसलिए वे भी समरसेन के साथ कुंडलिनी द्वीप के लिए चल पड़े । निर्मल व प्रशांत महा समुद्र में एक महीने की यात्रा करके एक दिन प्रातःकाल वे सब कुंडलिनी द्वीप में पहुँच गये ।

कई वर्ष बाद लौटे हुए समरसेन तथा उसके सैनिकों का उस द्वीप के राजा और प्रजा ने अभूतपूर्व स्वागत किया । अपने साथ धन के ढेरों को लाने के उपलक्ष्य में प्रजा ने समरसेन आदि का भारी सम्मान भी किया । (समाप्त)

कर्तव्य

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, आपके अन्दर उदारता का जो गुण है, वह बहुत कम लोगों में पाया जाता है। आप दूसरों के हित के वास्ते जो श्रम उठा रहे हैं, उसे देखने पर आप पर मुझे दया आती है। कभी-कभी ऐसे लोगों से मुसीबत का सामना करना पड़ता है जो उपकार पाकर भी कृतज्ञता प्रकट करने से दूर उल्टे वे ही उपकार करने वालों की निंदा करते हैं। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को सौगंध देश के राजा गुणपाल की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: सौगंध देश के राजा गुणपाल के रणपाल नामक एक पुत्र

बेताल कथाएँ

था। इसी प्रकार उनके मंत्री के लिए जयवर्मा नामक एक पुत्र था और सेनापति के लिए वीरसिंह नामक एक पुत्र था। ये तीनों समान उम्र के थे। एक ही गुरु के यहां तीनों ने सारी विद्याएँ सीखीं। पहले ही यह निर्णय हो चुका था कि रणपाल जब गद्दी पर बैठेगा, तब उसके होने वाले मंत्री जयवर्मा तथा सेनापति वीरसिंह हैं।

युवराजा रणपाल एक दिन मंत्री-पुत्र जयवर्मा, सेनापति के पुत्र वीरसिंह तथा थोड़े से परिवार को साथ लेकर शिकार खेलने जंगल में गया।

सूर्योदय के साथ उन लोगों ने शिकार खेलना शुरू किया और शाम तक वे लोग शिकार खेलते रहे। शिकार खेलते वक़्त रणपाल भूख-प्यास तक की चिंता नहीं करता। उस दिन रणपाल कई खूंख्वार जानवरों तथा हिरणों का शिकार करके खूब थक गया था। संध्या के समय एक बाघ झाड़ी की ओट में से अचानक रणपाल पर हमला कर बैठा। रणपाल उस हमले का सामना करने को तैयार न था। थोड़ी सी असावधानी हो जाने पर वह निश्चय ही बाघ के मुँह में चला जाता; लेकिन ऐन मौके पर सेनापति के पुत्र वीरसिंह ने बाघ का सामना करके उसे मार डाला।

इस पर रणपाल ने वीरसिंह को गले लगाकर कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा—"दोस्त, आज तुमने मेरी जान बचाई! तुम इस वक़्त मेरे साथ न होते तो मैं जरूर बाघ के मूँह में चला गया होता।"

इस पर वीरसिंह ने प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दिया—"युवराज, यह तो मेरा कर्तव्य है।"

इसके बाद रणपाल अपने परिवार के साथ राजधानी की ओर चल पड़ा। रणपाल और मंत्री पुत्र जयवर्मा आगे चल रहे थे और सेनापति का पुत्र वीरसिंह परिवार के एक खास आदमी से बातचीत करते हुए पीछे चल रहा था।

उस वक़्त एक पेड़ की ओट में से सवेरे के शिकार में घायल हुई एक बाघिन

अचानक रणपाल पर हमला करने को हुई। रणपाल ने बाघिन का सामना करने के लिए तलवार खींचा, मगर बाघिन के पंजे की चपेट में आकर नीचे गिर गया। इस पर मंत्री के पुत्र जयवर्मा ने झट से नीची गिरी तलवार को लेकर बाघिन के कलेजे पर वार किया, चोट खाकर बाघिन उसी वक़्त ठण्डी हो गई।

उस वक़्त वीरसिंह थोड़ी दूर पर था। इसे देख वह दौड़े-दौड़े घटना-स्थल पर पहुँचा और एक बार और युवराज के द्वारा खतरे से बचने के एवज में उसका अभिनंदन किया, साथ ही अपनी ख़ुशी जाहिर की।

दूसरे दिन राजधानी की जनता ने युवराज के प्राण बचाने के उपलक्ष्य में वीरसिंह और जयवर्मा का अनेक प्रकार से अभिनंदन किया। राजा गुणपाल ने एक सभा बुलाई जिसमें वीरसिंह और जयवर्मा को निमंत्रण भेजा। उस वक़्त दरबार में उपस्थित सेनापति तथा मंत्री ने सोचा कि उनके पुत्रों का भारी पैमाने पर अभिनंदन होगा। यह सोचकर वे मन ही मन खुश हो रहे थे। पर राजा गुणपाल ने एक बार सभी दरबारियों की ओर अपनी दृष्टि दौड़ाकर कहा—"आप सबने सुना होगा कि मेरे पुत्र युवराज रणपाल को शिकार खेलते वक़्त भारी खतरों का सामना करना पड़ा था। मेरे पुत्र की जान बचाने के उपलक्ष्य में मैं मंत्री के पुत्र जयवर्मा को यह रत्नहार उपहार में देता हूँ और उसका अभिनंदन करते हुए उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ, लेकिन सेनापति के पुत्र वीरसिंह को इस बार क्षमा कर देता हूँ।"

राजा के मुँह से ये बातें सुनकर सारे दरबारी अचंभे में आ गये। क्योंकि उन सबने सोचा था कि राजा जयवर्मा के साथ वीरसिंह का भी सम्मान करेंगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, सौगंध राजा गुणपाल का यह व्यवहार कुछ विचित्र सा मालूम नहीं

होता ? अपने पुत्र के प्राण बचाने वाले वीरसिंह का सम्मान करने से दूर, उल्टे भरी सभा में 'इस बार के लिये तुम्हें क्षमा कर देता हूँ ।' कहकर उसकी निंदा करना क्या उसके उपकार के प्रति कृतघ्नता नहीं है ? इस संदेह का समाधान जानकर भी न देंगे तो आपका सर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया— "राजा के व्यवहार में मुझे कोई आश्चर्य की बात दिखाई नहीं देती ! वीरसिंह एक सेनापति का पुत्र है ! साथ ही भावी सेनापति है ! सेनापति तो अपने प्राणों का मोह छोड़कर राजा की रक्षा करता है ! राजा की विजय और पराजय सेनापति की प्रतिभा पर निर्भर होती हैं । राजा के प्राणों की रक्षा करना सेनापति का प्रथम कर्तव्य है । इस कारण रणपाल के प्राणों की रक्षा करना वीरसिंह का पेशेगत धर्म है, और कर्तव्य है ! इसके लिए विशेष रूप से प्रशंसा करने योग्य नहीं है ।

अब रही मंत्री के पुत्र जयवर्मा की बात ! वह तो सिर्फ़ राजा के सलाहकार है । राजा के प्राण बचाने में परोक्ष रूप में उसकी मेधा शक्ति काम देती है, पर उसे स्वयं तलवार धारण कर राज्य की रक्षा में लगने की जरूरत नहीं है । पर जयवर्मा ने खतरे के समय आगे आकर भावी राजा के प्राण बचाये हैं । इसलिए राजा ने उसका सम्मान किया है । वास्तव में दूसरी बार भी वीरसिंह को आगे आकर रणपाल की रक्षा करनी थी । लेकिन वह अपनी ज़िम्मेदारी भूल गया था, इसीलिए वह वक़्त पर राजा के साथ न रहा । यही वीरसिंह का अपराध था । इस वास्ते सौगंध राजा उसे दण्ड भी दे तो कोई गलती न होगी, मगर राजा ने ऐसा न करके अपनी उदारता साबित की है ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा । (कल्पित)

धोखे का खाता

रामनाथ और शिवराम हर साल होड़ लगाकर एक उत्तर देश की यात्रा करता तो दूसरा दक्षिण देश की। पर रामनाथ ज्यों ही यात्रा से लौटता, त्यों ही यात्रा का पूरा ख़र्च तथा रास्ते में धोखे व दगे के शिकार हो खोने वाले धन का हिसाब करके मन ही मन बड़ा दुखी हो जाता; पर शिवराम एकदम अविचल रहता।

रामनाथ से रहा न गया, शिवराम के व्यवहार पर रामनाथ चकित था। इसे देख एक दिन वह शिवराम से पूछ ही बैठा—"शिवराम, मैं हर साल यात्रा के समय तरह-तरह के धोखों का शिकार हो काफी धन खो जाया करता हूँ और दुखी होता रहता हूँ! तुम इस दुख से बचने के लिए क्या किया करते हो?"

इस पर शिवराम मुस्कुराकर बोला—"यात्रा के प्रदेशों में हम जैसे नये लोगों को वहाँ के लोग किसी न किसी तरह से धोखा दिया करते हैं! इस मुसीबत से हम बच नहीं सकते। इसीलिए मैं यात्रा के समय खाने का खाता, किराये का खाता, पूजा-अर्चना का खाता, इसी तरह के अन्य खातों जैसे धोखे का खाता पहले ही तैयार करके तब घर से निकल पड़ता हूँ। इस कारण मुझे बाद में दुखी होने की जरूरत नहीं पड़ती।"

तब जाकर रामनाथ को असली बात मालूम हो गई।

चमत्कार का सत्कार

शहर जाने वाले रास्ते के किनारे एक पेड़ की छाया में दो आदमी सो रहे थे। उनकी गठरियों का पहरा तीसरा आदमी दे रहा था। उस वक़्त वहाँ पर कोई अजनबी आया और उन लोगों से थोड़ी दूर पर एक पेड की छाया में जा बैठा। उस आगंतुक की पोशाकें देखने पर वह कोई अमीर जैसा लग रहा था।

उस आदमी ने पहरा देनेवाले आदमी की ओर तथा सोनेवाले आदमी की ओर नज़र दौड़ाकर देखा। उसे लगा कि वे तीनों आदमी गरीब हैं। अमीर ने उन लोगों से पूछा—"तुम लोग कौन हो?"

पहरा देनेवाले व्यक्ति ने सोनेवाले एक आदमी की ओर इशारा करके बताया—"वह अन्न की याचना करने वाला है।" फिर दूसरे आदमी की ओर संकेत करके कहा—"वह आदमी चाहकर भी न पाने वाली चीज़ों के अभाव में जीने का रास्ता न जानने वाला है। हम तीनों शांति के साथ अपने दिन काटने के लिए यहाँ पर आये हैं! रखने की चाह रखते हुए न रहने वाली चीज़ों से याचना करते हुए, रुकने की प्रार्थना करने पर न रुकने वाली चीज़ के साथ अपने दिन बिता रहे हैं।"

ये चमत्कारपूर्ण बातें सुनकर अमीर आदमी बड़ा खुश हुआ और उनके हाथ थोड़ा सा धन देकर बोला—"मैं इस देश के राजा के निकट व्यक्तियों में से एक हूँ। कल तुम लोग दरबार में आकर राजा के दर्शन कर लोगे तो वे तुम्हें उचित पुरस्कार देंगे।" इसके बाद उन्हें दरबार में प्रवेश करने के लिए अनुमति पत्र देकर अमीर अपने रास्ते चला गया।

दूसरे दिन राजा सत्यवान ने अपने दरबारियों के सामने कुछ सवाल रखे—

सुदर्शन वर्मा

"अन्न की याचना न करने वाला कौन है? चाहकर भी न पा सकने वाली चीज़ क्या है? मनुष्य शांति के साथ कब रह सकता है? रखने की चाह करने पर भी न रहने वाली चीज़ क्या है? रुकने की प्रार्थना करने पर भी न रुकने वाली चीज़ क्या है? इन सवालों का उचित जवाब देनेवालों को बढ़िया पुरस्कार दिया जाएगा!"

ये सवाल सुनकर सभी दरबारी एक दूसरे का चेहरा देखने लगे। पर किसी को भी इन सवालों के सही जवाब न सूझें।

राजा थोड़ी देर रुककर बोले–"हमारे दरबारियों में कई पंडित हाज़िर हैं, मुझे आश्चर्य होता है कि ऐसे महान पंडित भी इन सवालों के जवाब नहीं दे पा रहे हैं!"

इतने में एक सेवक ने प्रवेश करके निवेदन किया–"महाराज, तीन आदमी आपके दर्शन करने के लिए आये हुए हैं। वे लोग अपने साथ दरबार में प्रवेश करने के लिए अनुमति-पत्र ले आये हैं!"

इस पर राजा ने उन्हें दरबार में हाज़िर करने की आज्ञा दे दी। वे तीनों दरबार में पहुँचे। राजा ने उनकी ओर प्रश्नार्थक दृष्टि दौड़ाई। इस पर एक आदमी ने कहा–"महाराज, मेरा नाम वीरभद्र है! महाराज के सामने अपने पांडित्य का प्रदर्शन करके पुरस्कार पाना चाहा, मगर आज तक मुझे दरबार में प्रवेश करने की अनुमति नहीं मिली। मैं अपने पिता और भाई को साथ लेकर पेट न भर सकने वाले थोड़े अन्न के साथ अपने दिन काट रहा हूँ। भाग्यवश कल एक अमीर ने हमारी मदद की और दरबार में प्रवेश करने का अनुमति-पत्र दिया, इसीलिए आज हम आपकी सेवा में हाज़िर हो सकें!"

इस पर राजा के अंतरंग सलाहकार ने अपने आसन से उठ खड़े होकर कहा–"प्रभू! मैंने इसी व्यक्ति के बारे में आप से कल निवेदन किया था।"

उस समय सारे दरबार में कानाफूसी शुरू हुई। एक वृद्ध व्यक्ति ने राजा के

समीप जाकर निवेदन किया—"महाराज, आपने इसके पहले दरबारियों के सामने जो सवाल रखे, उनका जवाब मेरी पोती दे सकती है। कृपया उसे मौक़ा दीजिए!"

इस पर दरबार में फिर कानापूसी शुरू हो गई। वृद्ध ने क्रोध पूर्ण आँखों से दरबारियों की ओर देख राजा से कहा—"महाराज, हमारे दरबारी पंडित यह सोच कर प्रतिभाशाली नये व्यक्तियों को आपके दर्शन कराने से रोक रहे हैं कि कहीं उनके बड़प्पन में कलंक लग जाय! इसी वजह से बड़ी विदुषी बनी मेरी पोती को आज तक आपके दर्शन करने का भाग्य प्राप्त न हुआ।"

इसके बाद राजा ने एक सेवक को भेज कर वृद्ध की पोती को बुलवा भेजा। उसका नाम कात्यायनी था। उसके चेहरे के वर्चस्व को देख सारे दरबारी विस्मय में आ गये। राजा ने कात्यायनी के सामने अपने सारे सवाल रखे जो इसके पहले दरबारियों के सामने रखे थे। इस पर कात्यायनी ने थोड़ा भी विलंब किये बिना यों जवाब दिया—"महाराज, अन्न की याचना न कर सकनेवाला व्यक्ति गूंगा है, तर्कपूर्वक विचार करने पर यह बात सबकी समझ में आ सकती है! चाहकर भी न पा सकने वाली चीज बुद्धिमता है! क्योंकि बुद्धिमता ज़्यादातर जन्म के साथ ही प्राप्त हो जाती है! हर एक आदमी निद्रा के समय ही शांतिपूर्वक रह सकता है! रखने की चाह करके भी न रखी जानेवाली चीज़ मानव का शरीर है। अब रोकने की प्रार्थना करने पर भी न रुकने वाली चीज़—समय है, काल है! इन बातों को वीरभद्र ने चमत्कार पूर्वक यों बताया है कि वह अपने गूँगे पिता तथा बुद्धिमता न रखने वाले भाई के साथ याचना करते हुए ज़िंदगी के बोझ से दबा जा रहा है।"

ये उत्तर सुनकर राजा के साथ राज दरबारी भी प्रसन्न हुए, सबने हर्ष ध्वनि की। इसके बाद राजा ने वीरभद्र और कात्यायिनी की दिल खोलकर प्रशंसा की और उनका भारी सत्कार किया।

बड़ों की दगाबाजी

पुराने जमाने में किसी नगर में एक न्यासी रहा करता था। वह अनाथों के प्रति बड़ी दया रखता था। अनाथों को आश्रय देकर उनकी तक़लीफ़ें दूर करके उनकी मदद किया करता था।

उसी नगर में एक भिखारी रहता था, जो तरह-तरह के भेष बनाकर जनता से दान वसूल करके अपना पेट पालता था। उसे मालूम हुआ कि अमुक न्यासी बड़ा धर्मात्मा और दानी है। इस पर उसके यहाँ जाकर बहुत बड़ा दान पाने की इच्छा भिखारी के मन में पैदा हो गई। फिर क्या था, उसने अपने पैर पर किसी पत्ते का रस निचोड़कर ऐसा बनाया जिससे पैर सूज जाय। इस तरह की विद्याओं में वह, बड़ा कुशल था, इसलिए कोई भी साधारण आदमी उसके इस धोखे का पता न लगा पाया। एक दिन वह न्यासी के घर पहुँचा, घर के सामने कराहते, पीड़ा का अनुभव करते पड़ा रहा। न्यासी के घर जो लोग आते-जाते थे, वे रहम खाकर कुछ छुट्टे पैसे दान देने लगे। मगर वह तो न्यासी का दान चाहता था, इसलिए वह उसी जगह बैठा रहा।

थोड़ी देर बाद न्यासी खुद बाहर आया, उसे देखते ही भिखारी चीखकर रो पड़ा—"बाबूजी, दया कीजिए! पीड़ा के मारे मरा जा रहा हूँ!"

भिखारी के पैर को देखते ही न्यासी का कलेजा पिघल गया। उसने अपने नौकरों को बुलाकर आदेश दिया—"बेचारा यह बहुत परेशान है! इसको ले जाकर मेरे बिस्तर पर लिटा दो। मैं अच्छे वैद्यों को बुलवा देता हूँ, इसकी सेवा-शुश्रूषा में कोई कमी न होने पावे।" यों समझाकर वह धर्मात्मा चला गया।

२५ वर्ष पुरानी चन्दामामा की कहानी

न्यासी के सेवकों ने भिखारी को उसके क़ीमती पलंग पर लिटाया! थोड़ी देर बाद दो वैद्य भिखारी के पैर की जांच करके उचित दवा-दारू करने आ पहुँचे। वे दोनों उस नगर के मशहूर वैद्य थे।

अब भिखारी की हालत ऐसी हो गई जैसे कि फल तोड़ने गया तो पत्थर आकर सिर पर गिरा। उसने सोचा कि न्यासी कोई बड़ा दान देकर भेज देंगे, मगर अब उसे इन वैद्यों से पाला पड़ा।

एक वैद्य ने भिखारी के पैर की जांच करके बताया—"ओह, यह फोड़ा अब इलाज करने लायक़ न रहा, इसका पैर काट देना होगा।"

भिखारी को लगा, मानो उसके दिल की धड़कन बंद होने वाली है।

दूसरे वैद्य ने भिखारी के पैर की बड़ी सावधानी से जांच की, तब अपनी राय बता दी—"यह तो नकली सूजन है! ये भिखारी किसी पत्ते का रस निछोड़कर ऐसी बीमारियों की सृष्टि करते हैं। थोड़ी देर बाद यह सूजन अपने आप जाती रहेगी। इसके लिए दवा-दारू करने की कोई जरूरत नहीं है।"

पहले वैद्य ने भी जांच करके यही बात जान ली कि इसकी बीमारी सचमुच की नहीं है, नकली है।

इस पर दोनों वैद्यों को भिखारी पर बड़ा गुस्सा आया। एक ने कहा—"अगर

हम इलाज करते तो न्यासी हमें भारी रक़म दे देता। इस कमबख़्त ने हमारे मुंह में धूल झोंक दिया। हम इसकी बाबत सच सच न्यासी को बता देंगे।"

इस पर दूसरे वैद्य ने कहा–"नहीं, इसकी बीमारी भयंकर बताकर इसका पैर काट डालेंगे, तभी इसे उचित सबक़ मिलेगा।"

ये बातें सुनने पर भिखारी को अपनी जान का डर सताने लगा। वह बिस्तर पर से झट उठा और बोला–"महाशयो, पैसों के लोभ में पड़कर मैंने यह स्वांग रचा है। मेहर्बानी करके मुझे बचा लीजिए। मेरा पैर न काटियेगा, इससे आपको क्या फ़ायदा पहुंचने वाला है?" यों कहकर उनके पैरों पर गिरकर गिड़गिड़ाने लगा।

इस पर दोनों वैद्यों ने आपस में बात की, तब यह निर्णय किया–"अब भी कुछ बिगड़ा नहीं, इसके पैर का इलाज करने का अभिनय करके हम अपना शुल्क वसूल कर लेंगे।"

यों निश्चय कर भिखारी से बोले– "अबे, सुनो! तुम अपना मुंह खोलोगे तो खबरदार! जब तक हम तुम्हें सूचना न देंगे तब तक तुम न्यासी से बताते जाओ कि अभी तक पैर का इलाज पूरा नहीं हो पाया है। वरना तुम्हारा यह पैर काट दिया जाएगा। याद रखो।" यों उसे डरा दिया।

वैसे भिखारी अपना पेट भरने के लिए लोगों को धोखा दिया करता था, मगर इन नामी वैद्यों की दगाबाजी देख वह अचरज में आ गया। मगर वे लोग जैसी हिम्मत रखते थे, वैसी हिम्मत उसके अंदर न थी। इसलिए उसने वैद्यों के कहे मुताबिक किया।

वैद्यों ने न्यासी को समझाया— "महाशय, बेचारा यह बड़ा अभागा है। खतरे की हालत में है, ईश्वर की कृपा से यह आपकी नजरों में आ गया है! आप ने हमको बुला भेजा। हम यथा-शक्ति इसके पैर का इलाज़ करने की कोशिश करेंगे। इसके बाद जैसी ईश्वर की इच्छा!"

इसके बाद दो वैद्य रोज़ आ जाते, पैर की पट्टी खोल देते, फिर पट्टी बांध कर चले जाते। धीरे-धीरे सप्ताह और महीने बीतने लगे। पर पैर का इलाज़ न हो पाया। वैसे भिखारी के दिन सब तरह से मजे में कटने लगे। मगर उसे स्वेच्छा के साथ गली-कूचों में भीख मांगना ही अच्छा लगा।

भिखारी अब वैद्यों से प्रार्थना करने लगा—"महाशयो, आप मेरे पैर का इलाज जल्दी पूरा कीजिए! आपका पुण्य होगा!"

तीन महीने तक झूठा इलाज करने के बाद भिखारी से तंग आकर वैद्यों ने न्यासी को बताया कि भिखारी का इलाज़ समाप्त हो गया है। इस पर न्यासी बड़ा खुश हुआ और वैद्यों को पुरस्कार के साथ धन देकर भेज दिया।

इसके बाद न्यासी ने भिखारी से पूछा— "सुनो भाई, अब तुम्हारा पैर ठीक हो गया है। तुम क्या काम करोगे? और कैसे अपनी ज़िंदगी बिताओगे?"

"बाबूजी, मेरी अक्ल ठिकाने लग गई है! अब मैं ज़िंदगी भर भीख नहीं मांगूंगा। मैं दूसरा कोई भी काम कर सकता हूँ!"

भिखारी की यह बात न्यासी की समझ में न आई, मगर उसने भिखारी को कोई नौकरी देकर अपने ही पास रख लिया।

प्राचीन काल में कुरु राज्य की राजधानी पांचाल नगरी पर रेणुक नामक राजा राज्य करते थे। उन्हीं दिनों में हिमालयों में पांच सौ साधुओं के गुरु महारक्षित नामक तपस्वी भी रहा करते थे।

एक बार महारक्षित अपने शिष्यों के साथ देशाटन करते पांचाल नगर में आ पहुँचे। साधुओं के आगमन पर राजा बहुत ख़ुश हुए। महारक्षित का उचित रूप से स्वागत-सत्कार करके उद्यान वन में उनके ठहरने का अच्छा इंतजाम किया।

वर्षा ऋतु के बीतने तक महारक्षित उद्यान वन में रहे, इसके बाद राजा से विदा लेकर हिमालयों की ओर चल पड़े। वापसी यात्रा में सभी लोग एक पेड़ की छाया में बैठकर राजा के सत्कार की चर्चा करने लगे। बातों के सिलसिले में यह प्रसंग आया कि राजा के कोई संतान है या नहीं! इस पर महारक्षित के कुछ ज्योतिषी शिष्यों ने चर्चा शुरू की। उस संदर्भ में महारक्षित ने बताया कि थोड़े दिन बाद राजा रेणुक के यहाँ देवता अंशवाला एक पुत्र जन्म लेगा।

सब शिष्य यह जानते थे कि महारक्षित के मुँह से जो बात निकलती है, वह सच होती है। ये बातें सुनने पर महारक्षित के एक शिष्य के मन में दुर्बुद्धि पैदा हो गई। उसने और शिष्यों से बताया कि वह थोड़ा पीछे उनके साथ चलेगा, तब सबके चले जाने पर वह पांचाल नगर को लौट पड़ा।

राजधानी में पहुँचकर राजा के दर्शन करके उसने कहा—"महाराज, जब हम लोग हिमालयों को लौट रहे थे, तब अचानक हमें आपकी याद आई। हमारे सामने यह प्रश्न उठा कि राजा की वंशलता आगे बढ़ेगी या नहीं? हमने अपनी दिव्य दृष्टि से जान

लिया कि आपके यहाँ देवता अंश वाला एक पुत्र पैदा होगा! यही बात मैं आपको बताने आया हूँ।" यों कहकर वह दुष्ट साधू लौटने को हुआ।

यह शुभ समाचार सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुए और साधू को रोककर बोले–"महात्मा, आप तो दिव्य चक्षु वाले हैं! आप कृपया यहीं पर रह जाइये।"

इस पर दुष्ट बुद्धि वाले योगी ने राजा की बात मान ली। राजा ने उद्यान वन में उस योगी के ठहरने के लिए सारी सुविधाएँ कर दीं और उसकी सेवा करने लगे। वह धूर्त योगी-उद्यान के एक कोने में साग-सब्जी पैदा करके मालियों के हाथ उसे बिकवाकर धन कमाने लगा।

उन्हीं दिनों में बोधिसत्व रेणुक राजा के पुत्र के रूप में पैदा हुए। उनका नामकरण सुमनस किया गया।

सुमनस जब सात साल के हुए, तब राजा रेणुक को अपने सामंत राजाओं के साथ युद्ध करना पड़ा। राजा की गैर हाज़िरी में एक दिन सुमनस उद्यान वन को देखने गये। वहाँ पर गेरुए वस्त्रधारी योगी पौधों के लिए थांवले बनाकर माली से भी कहीं ज्यादा मेहनत करते दिखाई दिया।

सुमनस ने कपट योगी को पहचान लिया और उसे उचित सबक सिखाने के ख्याल से बोले–"अरे माली, तुम क्या करते हो?"

Hindi Nov. F—5 P. 32

दिव्य चक्षु वाले के रूप में प्रसिद्ध वह धूर्त योगी सुमनस की यह पुकार सुनकर चौंक पड़ा। उसने भांप लिया कि सुमनस ने उसके रहस्य को समझ लिया है।

उसी वक़्त सुमनस का अंत करने का निश्चय करके योगी ने एक उपाय सोचा।

युद्ध भूमि से राजा के लौटने का समाचार पाकर कपट योगी ने अपने कमण्डलु और आसन के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। साथ ही आश्रम के चारों तरफ़ घास-फूस फेंक दी। इसके बाद सारे बदन में तेल मलकर कराहते हुए एक कोने में लेट गया।

लड़ाई से लौटकर राजा अपने गुरु को देखने गये। उन्हें आश्रम का परिसर गंदा दिखाई दिया। आश्रम के भीतर योगी कराहते हुए लेटा था। इस पर राजा ने हाथ जोड़कर पूछा—"महात्मा, कृपया बताइये, आखिर क्या हो गया है?"

"महाराज, यह सब आपके पुत्र की करनी है।" इन शब्दों के साथ सुमनस पर कपट योगी ने कई झूठ-मूठ के इलज़ाम लगाये।

राजा क्रोध में अंधे हो गये और उसी वक़्त बधिकों को बुलाकर आदेश दिया—"तुम लोग सुमनस का सर काटकर मेरे पास ले आओ।"

उस वक़्त सुमनस अपनी माँ के पास बैठे थे। बधिकों ने जाकर सुमनस को यह ख़बर सुनाई। सुमनस ने अपने पिता

के पास आकर बताया–"पिताजी, आप इस कपट योगी को एक महात्मा मान बैठे हैं और उनकी पूजा करते हैं। लेकिन वह क्या-क्या करते हैं, इसकी सचाई आप द्वारपालों के द्वारा जानने की कृपा कीजिए।"

इस पर राजा ने चारों द्वारपालों को बुला भेजा। उन लोगों ने सच्ची बात बता दी, इस पर राजा ने आश्रम की तलाशी करवाई, तब कपट योगी ने जो धन छिपा रखा था, सारा मिल गया।

राजा अपनी भूल पर बहुत दुखी हुए और अपने पुत्र से बोले–"बेटा, तुम मेरी जल्दबाज़ी को माफ़ कर दो और आज से तुम्हीं इस राज्य पर शासन करो।"

पर सुमनस ने नहीं माना। वे बोले– "महाराज, जैसे शक्तिशाली जड़ीबूटी जो काम कर सकती है, वही काम मुंह से निकलने वाली बात भी कर जाती है! आपके मुँह से दुष्ट वाणी निकल पड़ी है! आपके आदेशानुसार माता के पास बैठे हुए मुझे बधिक वध्यशिला के पास ले जाते हुए। मैं अभी आपके राज्य को छोड़ कर चला जा रहा हूँ।"

इस पर राजा ने सुमनस के निश्चय को बदलने के लिए रानी से अभ्यर्थना की, पर धर्म भावना रखने वाली रानी ने राजा की बात नहीं मानी, उल्टे अपने पुत्र को आशीर्वाद देते हुए कहा–"बेटा, तुम धर्मात्मा हो! पवित्र जीवन बिताते हुए इहलोक से तर जाओ।"

इसके बाद सुमनस हिमालयों में पहुँचे और वहाँ पर विश्वकर्म द्वारा निर्मित कुटी में तपस्या करते अपना समय बिताने लगे।

राजा ने कपट योगी को मृत्यु दण्ड सुनाया, साथ ही उन्होंने यह कानून बनाया कि उनके राज्य में कोई भी व्यक्ति योगियों को आश्रय न दें।

इस कारण दुष्ट बुद्धि वाले एक कपट योगी की करनी पर सारे राज्य में योगियों का अपमान हुआ और कुरु राज्य में योगियों को जनता के द्वारा आदर मिलना बंद हो गया।

शिलादित्य

सातवीं शताब्दी में शिलादित्य काश्मीर पर शासन करते थे। उनके मन में एक महा साम्राज्य स्थापित करने की प्रबल इच्छा थी। वह युद्ध प्रेमी थे। एक बार वे गोबी रेगिस्तान के एक छोटे राज्य को जीतने के लिए अपनी सेना के साथ चल पड़े।

रास्ते में एक जगह एक नया आदमी दौड़ते आया और शिलादित्य के घोड़े के सामने बैठकर साष्टांग दण्डवत करने लगा। राजा ने अपने घोड़े को रोका। गुप्तचरों ने पता लगाया कि वह नया व्यक्ति उस देश का मंत्री है, जिस देश पर शिलादित्य हमला करने जा रहे हैं।

राजा के पूछने पर शत्रु देश के मंत्री ने अपनी कहानी यों बताई—उसने महान शक्तिशाली शिलादित्य की अधीनता स्वीकार करने के लिए अपने राजा को सलाह दी, लेकिन उसके राजा ने शिलादित्य की निंदा करके उस पर कोड़े लगवाये।

इस पर शिलादित्य ने शत्रु देश के मंत्री को वचन दिया कि उसके राजा ने शिलादित्य का जो अपमान किया है, उसका बदला लिया जाएगा। इस पर मंत्री ने सुझाव दिया–"महाराज, आप इस मार्ग पर चलेंगे तो हमारे राज्य में पहुँचने के लिए आपको तीन महीने लग जायेंगे। रेगिस्तान से होकर नज़दीक के रास्ते से जाने पर आप दो हफ़्ते में पहुँच सकते हैं।"

इस पर शिलादित्य ने नजदीक के रास्ते पर यात्रा करने का निश्चय किया। रेगिस्तान में पानी नहीं मिलता है। मंत्री की सलाह के अनुसार राजा ने अपनी सेना के लिए दो हफ़्ते के वास्ते पानी अपने साथ लिया। इसके बाद मंत्री रेगिस्तान में रास्ता दिखाने लगा। सेना उसके पीछे आगे बढ़ी।

रेगिस्तान की यात्रा सेना के लिए बड़ी दुखदायक मालूम हो गई। रास्ते भर में थोड़ी सी भी छाया देने वाला एक भी पेड़ न था। इस प्रकार पन्द्रह दिन की रेगिस्तान की यात्रा करने पर सारा पानी चुक गया। इस पर पानी के अभाव में राजा के कुछ घोड़े और हाथी मर गये।

मंत्री बराबर राजा तथा सेना को यही हिम्मत बंधवाता रहा कि हमें जिस राज्य में पहुँचना है, वह बहुत ही निकट आ गया है। मगर कहीं भी जनता का निवास करने वाला प्रदेश नज़र न आया। धीरे-धीरे लू के असर से सैनिक मरने लगे। सेनापतियों ने बताया कि रेगिस्तान की आगे की यात्रा सबकी मौत का कारण बन जाएगी।

मंत्री की बातों पर तंग आकर शिलादित्य ने डांटकर उससे पूछा—"हम लोग कब तुम्हारे राज्य की सीमा पर पहुँच जायेंगे?" मंत्री ने जवाब दिया—"महाराज, आप जल्दी ही अपनी सेना के साथ मौत के मुंह में जाने वाले हैं! आप चाहें तो मुझे मौत की सजा दे दीजिए! लेकिन आप इस भयंकर मरुभूमि में चाहे आगे बढ़ें या पीछे लौटें, आपकी मौत निश्चित है।"

इसके बाद मंत्री ने बताया कि उसने जान-बूझकर सेना को पानी न मिलने वाले रेगिस्तान में पहुँचा दिया है। वह अपने छोटे से राज्य को बचाने के लिए अपनी आत्माहुति देने को तैयार हो गया है। राजा को विश्वास दिलाने के लिए उसने अपने बदन पर कोड़े लगवा लिये हैं। यों अपनी योजना बताकर बोला—"महाराज, आप मेरा सर काट डालियेगा!"

फिर भी शिलादित्य निराश न हुआ। उसने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि वे पानी की खोज करें। उनके साथ एक जलवेत्ता भी था। उसने जिस जगह में पानी के होने का कोई अंदाजा लगाया, वहाँ पर बड़ी गहराई तक खोदने पर भी थोड़ा पानी भी न निकला।

राजा के आदेश पर सैनिक और गहराई तक खोदने लगे, तब अचानक पानी का सोता निकल आया। सैनिक उत्साह में आकर उछल-कूद करने लगे। इसके बाद शिलादित्य ने वापसी यात्रा के हेतु बड़े-बड़े पात्रों में पानी भरवाया।

तब वे मंत्री से बोले–"तुम्हें मैंने इसलिए मरवा नहीं डाला कि तुम भी हमारे साथ इस मरुभूमि में प्यास की पीड़ा से मर गये होते! लेकिन अब प्रकृति ने हमारे प्रति दया दिखाई है, इस वजह से मैं तुम्हारे प्रति दया दिखाना चाहता हूं। तुम्हारी देश-भक्ति प्रशंसनीय है!"

जीने का तरीका

एक खुरदरा व्यापारी गोविंद शहर में अपना व्यापार पूरा करके बैलों की गाड़ी में अपने गाँव की ओर चल पडा। रास्ता एकदम साफ़-सुथरा और समतल था। किसी तरह के झटके के बिना ठीक से चलनेवाली गाडी अचानक एक जगह कीचड़ में धंस गई।

गाड़ी में माल भरा था, इसलिए गोविंद बड़ी कोशिश करके भी गाड़ी को कीचड़ से बाहर निकाल न पाया। रास्ते के किनारे एक झोंपड़ी थी। गोविंद झोंपड़ी के पास पहुँचा और अपना सारा हाल सुनाकर गाड़ी को कीचड से बाहर निकालने की प्रार्थना की।

झोंपड़ी में निवास करनेवाला अधेड़ उम्र का एक आदमी दस साल की उम्रवाले एक लड़के के साथ बाहर आया और गाड़ी के पहिये को कीचड़ से बाहर निकाला, तब हाथ झाड़ते एक ओर खड़ा हो गया। गोविंद उस के हाथ एक सिक्का धरकर बोला--"भाई, तुम इस तरह दिन-रात लोगों की मदद करते काफी रुपये कमाते होगे न?"

"मेरे बाबूजी को रात के वक़्त बिलकुल फ़ुरसत नहीं मिलती! रात भर तालाब से पानी लाकर सारे रास्ते को कीचड़ बनाना पड़ता है मालिक!" झोंपड़ी वाले आदमी के बेटे ने सच बात बता दी। यह खबर सुनकर गोविंद हक्का-बक्का रह गया।
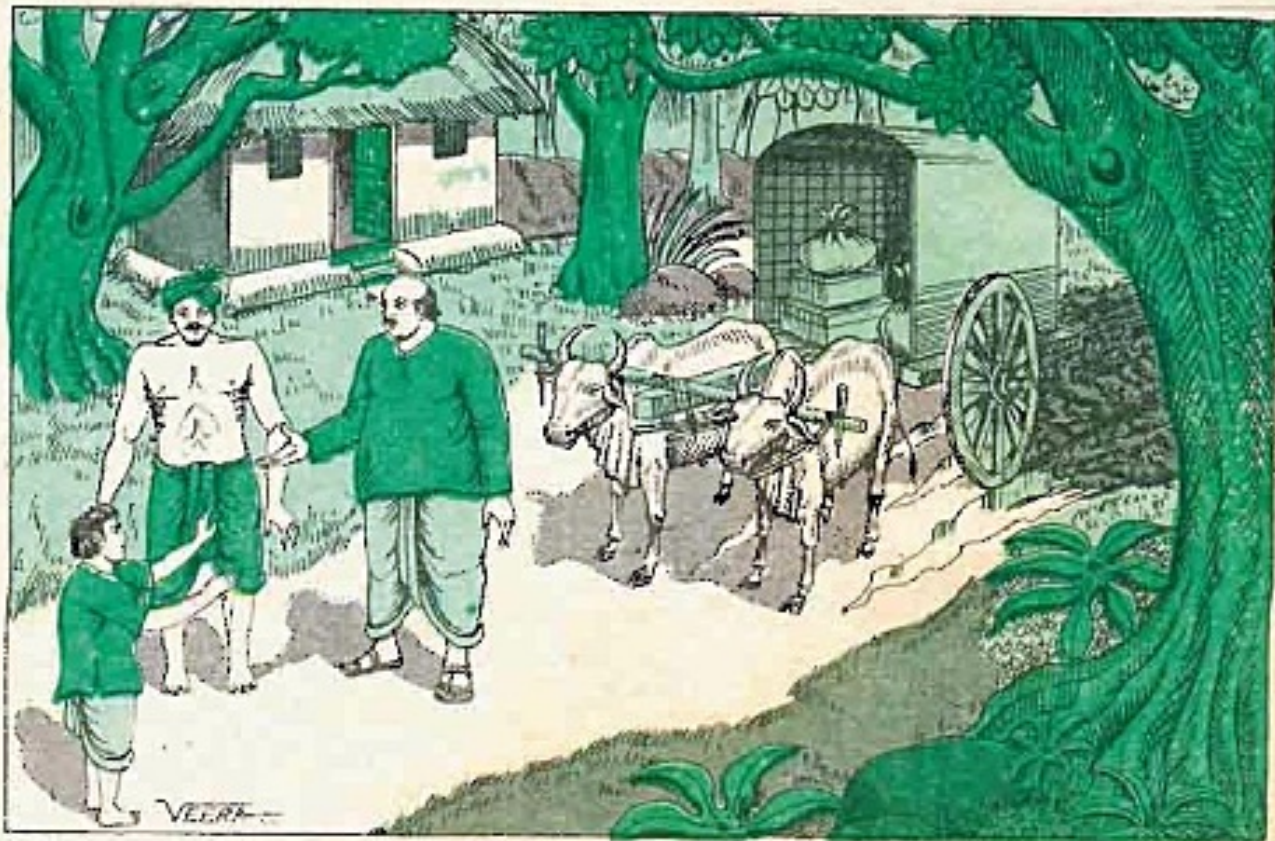
ख़तरा टल गया

पुष्पपुर और चन्दनपुर पड़ोसी राज्य थे। दोनों राज्यों के बीच चिरकाल से दोस्ती थी। एक बार पुष्पपुर के राजा जयकेतु ने चन्दनपुर के राजा सिंहकेतु को अपने राज्य का संदर्शन करने का निमंत्रण दिया। सिंहकेतु उनकी इच्छा को मान कर पुष्पपुर आ पहुँचे।

पुष्पपुर में सिंहकेतु का अपूर्व स्वागत किया गया और उनका आदरपूर्वक अतिथि-सत्कार किया गया। सिंहकेतु ने तीन दिन पुष्पपुर में बिताये।

तीसरे दिन दुपहर के समय भोजन के बाद जयकेतु तथा सिंहकेतु ने शौक से शतरंज खेलना शुरू किया, पर सिंहकेतु बराबर हारते गये। इस पर उन्हें अपमान सा लगा। स्वभाव से ही सिंहकेतु घमण्डी थे। वे अपनी छोटी सी हार को भी सहन न कर सकने वाले विचित्र स्वभाव के थे।

इस कारण सिंहकेतु उसी दिन अपने राज्य को लौट गये और एक हफ़्ते के अन्दर ही भारी सेना के साथ पुष्पपुर पर हमला करके उसे अपने राज्य में मिला लिया। तब जाकर उसका क्रोध शांत हो गया।

पुष्पपुर तथा चन्दनपुर राज्यों के बीस कोस की दूरी पर कनकपुर नामक एक और राज्य था। उस पर राजा विजय वल्लभ शासन करते थे। उनकी इकलौती बेटी मणिवल्लभी अनुपम रूपवती थी।

मणिवल्लभी जब युक्त वयस्का हो गई, तब राजा विजय वल्लभ ने अपनी पुत्री के स्वयंवर का इंतजाम किया।

राजाओं के पास निमंत्रण भेजने के लिए सूची तैयार होने लगी। उस वक़्त विजय वल्लभ के सामने एक भारी समस्या पैदा हो गई। वह यह थी कि चन्दनपुर

जानकी प्रसाद

के राजा सिंहकेतु के पास निमंत्रण-पत्र भेजना है या नहीं ?

निमंत्रण भेजने पर सिंहकेतु स्वयंवर में भाग लेने के लिए जरूर आ जायेंगे। लेकिन अगर स्वयंवर के समय राजकुमारी सिंहकेतु को छोड़ किसी दूसरे राजकुमार को बर लेगी तो वे इसे अपने लिए अपमान की बात समझ बैठेंगे, तब वे कोई न कोई उपद्रव खड़ा कर देंगे।

यदि उनके पास निमंत्रण न भेजा जाय तो वे यह सोचकर नाराज़ हो सकते हैं कि उनकी उपेक्षा की गई है। इस प्रकार राज्य के लिए खतरा पैदा हो सकता है। इसलिए राजा सोचने लगे कि इस उलझन को कैसे सुलझाया जाय।

मंत्री ने भांप लिया कि राजा मणिवल्लभ किसी चिंता के मारे परेशान हैं। राजा ने अपनी समस्या मंत्री के सामने रखी। मंत्री ने थोड़ी देर सोचकर कहा—"महाराज, आप इस समस्या को लेकर चिंता न करें, मैं इसे हल करने का कोई उपाय सोच लूंगा।"

इसके बाद सभी राजाओं के पास निमंत्रण-पत्र भेजे गये। स्वयंवर के दिन सभी राजाओं के साथ सिंहकेतु भी आ पहुँचे और वे दर्प के साथ उचित आसन पर विराजमान हो गये।

वरमाला हाथ में लेकर राजकुमारी मणिवल्लभी सभा में पहुँची और उसने रत्नपुर के युवराजा चन्द्रसेन के गले में माला पहना दी।

राजसभा हर्षध्वनि के साथ गूंज उठी। इसे देख सिंहकेतु का चेहरा तमतमाने लगा।

हर्षध्वनि के बाद थोड़ी देर में सभा भवन में शांति छा गई। तब मंत्री ने उठकर निवेदन किया—"इस स्वयंवर में भाग लेकर कार्यक्रम को सफल बनाने के उपलक्ष्य में मैं अपने राज्य की तरफ से सभी राजाओं के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ! अक्सर स्वयंवर के समय गड़बड़ियाँ हुआ करती हैं! निमंत्रित

राजाओं की संख्या ज्यादा होती है! मगर राजकुमारी किसी एक को ही बर सकती है, बाकी लोगों को निराश होना पड़ता है! आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि इसे आप लोग सहृदयता पूर्वक स्वीकार कर लें!

"जब से स्वयंवर के इंतजाम शुरू हुए, तब से हमारे मन में यह डर बना रहा कि स्वयंवर के समय कोई न कोई बखेड़ा पैदा हो जाएगा! सिर्फ़ हमारे मन में ही नहीं, बल्कि हमारे मित्र देश चन्दनपुर के राजा सिंहकेतु के मन में भी यह शंका पैदा हुई, इसलिए जरूरत पड़ने पर हमारी मदद करने के लिए वे भारी सेना लेकर यहाँ पर पधारे हुए हैं! बस, यही बात है! लेकिन वे स्वयंवर में भाग लेने के लिए नहीं आये हैं, हमारे राज्य से चौगुने बड़े भूभाग के अधिपति बने उन्हें हमारे देश के साथ रिश्ता जोड़ने की कोई जरूरत नहीं है। पर न मालूम क्यों, उन्होंने हमें यह बात सूचित नहीं की, लेकिन भेदियों के द्वारा हमें यह समाचार पहले ही मिल गया है। हमारी प्रार्थना के बिना ही वे हमारी मदद करने के लिए पधारे हैं, इसीलिए हम अपने राज्य की तरफ़ से उनके प्रति विशेष रूप से कृतज्ञता प्रकट करते हैं।"

मंत्री की बात पूरी होने के पहले ही सभा में उपस्थित राजकुमारों ने सिंहकेतु के जयकार किये। सिंहकेतु को यह सब कुछ विचित्र सा लगा। यदि वे मंत्री की बातों को झूठी बतला दे तो इसका मतलब होगा कि राजकुमारी ने उनका तिरस्कार किया है! यदि चुप रह जाय तो कम से कम मंत्री की यह तारीफ़ प्राप्त होगी! और साथ ही उनका आत्म-सम्मान बचा रहेगा।

यों विचारकर सभासदों के जयकार सुनते सिंहकेतु दर्प के साथ सिर चालन करने लगे।

इसके बाद सिंहकेतु राजा विजयवल्लभ के द्वारा खूब अतिथि-सत्कार पाकर खुशी के साथ अपने राज्य को लौट गये।

खतरा टलने की वजह से राजा विजय वल्लभ ने दिल खोलकर अपने मंत्री का अभिनंदन किया।

किफ़ायत

गोविदपुरी के एक कंजूस अमीर को नारायणपुर नामक गाँव में रहनेवाले अपने रिश्तेदारों की एक शादी में लाचार होकर जाना पडा। उन दो गाँव के बीच की दूरी चार कोस की थी। वैसे किराये की गाडियाँ भी मिल सकती थीं, मगर पैसे बचाने के ख़्याल से कंजूस अमीर पैदल ही चल पड़ा।

रास्ते में कंजूस की एक आदमी से मुलाक़ात हुई। बातों के सिलसिले में उसने कंजूस से पूछा–"इस कड़ी धूप में आप पैदल क्यों चलते हैं? किराये की गाड़ी ले लेते?"

"कड़ी धूप को सहन कर सकते हैं, मगर सब से बड़ी बात पैसों की किफ़ायती करनी है न?" कंजूस ने जवाब दिया।

"यह बात भी सही है, मुझे भी अगर एक पैसा ख़र्च करना पड़े तो मेरी जान छटपटाने लग जाती है!" ये शब्द कहते नये आदमी ने कमर से छुरी निकाली और बोला–"एक हफ़्ते पहले लाचार होकर आप जैसे एक आदमी पर मुझे इस छुरी का प्रयोग करना पड़ा, फिर से इसे सान धराने के लिए एक चवन्नी खर्च हो गई। आपके रुपये और अंगूठी निकालिये।"

कंजूस ने सोचा कि यह चोर भी उसी के जैसे पैसों की क़िफ़ायत करने वाला है, यों सोचकर कंजूस ने चुपचाप अपने रुपये और अंगूठी चोर के हाथ में दे दी।

दयालू भूत

माधव किसी काम से शहर गया, अपना काम पूरा करके सूर्यास्त के समय गाँव की ओर चल पड़ा। उसका विचार था कि तेज चलने पर वह आधी रात तक अपने घर पहुँच सकता है! मगर रास्ते में पड़ने वाले जंगल तक पहुँचते ही पानी बरसने लगा। वर्षा के थम जाने तक वह कांपते हुए एक पेड़ के नीचे खड़ा रहा और फिर उसने अपनी यात्रा चालू की, फिर भी वह आधी रात तक आधा जंगल ही पार कर पाया।

जोर की सर्दी पड़ रही थी। थोड़ी दूर पर सियारों और भेड़ियों की चिल्लाहटें सुनाई दे रही थीं। इसलिए माधव ने सोचा कि एक सुरक्षित स्थान देखकर सवेरे तक वहीं पर रुकना ज्यादा अच्छा होगा।

भाग्यवश रास्ते से हटकर थोड़ी दूर पर माधव को एक बहुत बड़ा बरगद दिखाई दिया। उस पेड़ के तने में सर छुपाने लायक एक खोखला उसे दिखाई दिया। इसलिए माधव खोखले के अन्दर जाकर बैठ गया। जल्द ही उसकी आँख लगी।

थोड़ी देर बाद ऊपर से खन-खन की आवाज हुई, माधव ने चौंककर आँखें खोल कर देखा। तीन भूत अंजुलियाँ भरकर खोखले के अन्दर पैसे उड़ेल रहे थे। उन भूतों को देख माधव घबरा कर चिल्ला उठा।

"घबराओ मत! हमको देख तुम पागल की तरह क्यों चिल्लाते हो?" भूतों ने पूछा। थोड़ा सँभलकर माधव ने जवाब दिया--"क्योंकि तुम लोग भूत हो, इसलिए!"

"सभी भूत एक से नहीं होते, हम तो दयालू भूत हैं!" एक भूत ने समझाया।

"ओह, ऐसी बात है! आज के जमाने के आदमी किसी बात में भूतों से कम नहीं

सरोजा गुप्त

होते! फिर भी मनुष्यों के अन्दर यह गलत धारणा घर कर गई है कि भूत तो खराब होते हैं और मनुष्यों के साथ दोस्ती करना चाहते हैं!" एक और भूत बोला।

"इसी वास्ते हम इस खोखले में रुपये छिपाते हैं, मनुष्य तो धन पर जान देता है! तुम तो अच्छे मौक़े पर हमारी नज़रों में पड़ गये। तुम यह सारा धन अपने गाँव वालों में बाँटकर उनके साथ हमारी दोस्ती करा दो।" तीसरा भूत बोला।

ये बातें सुनने के बाद भी माधव को गूंगे जैसे मौन देख तीनों भूत उससे गिड़-गिड़ाने लगे–"देखो भाई, तुम हमारा यह काम करके पुण्य कमा लो!"

"लोग भूतों के नाम से ही डरते हैं, मैं उन्हें समझाऊँगा कि यह धन तुम लोगों से पुरस्कार के रूप में प्राप्त हुआ है, मैं उनका डर दूर करूँगा।" यों कहकर माधव ने सारे रुपये ले लिये।

"सुनो भाई, तुम अगर यह काम करोगे तो हम तुम्हारे इस उपकार को कभी नहीं भूल सकते! तुम कल रात को फिर यहाँ पर आ जाओ।" यों कहकर भूत गायब हो गये।

अब सवेरा होने को था, माधव वह सारा धन लेकर खुशी-खुशी घर पहुँचा। "क्या शहर में तुम्हारा काम जल्दी हो गया? या फिर से जाना पड़ेगा? लेकिन तुम्हारे कंधे पर यह गठरी कैसी?" माधव की पत्नी ने पूछा।

"अरी पगली! मेरे कंधे पर हमारी क़िस्मत की गठरी पड़ी हुई है! अब हम शहर में अपना घर बसाकर ऐश-आराम करने वाले हैं!" यों कहते माधव ने सारे रुपये फ़र्श पर गिराये और सारी कहानी अपनी पत्नी को सुनाई।

"उफ़! तुम्हारी अक्ल पर पानी फिर गया है। इस थोड़े से धन को लेकर हम शहर में कैसे अपनी गृहस्थी चला सकते हैं? भूतों ने तुम्हें आज रात को फिर बुलाया है न? जाओ, थोड़ा और धन

लेते आओ!" यों कहकर उसने अपने पति को कोई उपाय भी बताया।

रात को भूत उसी बरगद के पास माधव का इंतज़ार करने लगे। माधव को देखते ही उत्साह में आकर भूत पूछ बैठे—"बताओ, हमारी भेंट पाकर बच्चों ने तुम से क्या कहा?"

"ओह, क्या बताऊँ! बच्चे इतने खुश हो गये और पूछने लगे कि हमें अपने काकाओं को जल्दी दिखला दो!" माधव ने जवाब दिया।

"वाह, बड़ी अच्छी बात है! तब तो चलो न!" भूत खुशी में आकर एक स्वर में पूछ बैठे।

"जल्दबाजी मत करो! बच्चों के खुश हो जाने से क्या फ़ायदा! बड़ों को भी खुश हो जाना चाहिए न? बच्चों को डराने वाले लोग वे ही होते हैं! उन्हें भी थोड़ा धन देकर खुश करना है! हाँ, तुम लोगों का यह कहना सच है कि सचमुच मनुष्यों के भीतर धन के प्रति बड़ी लालच है और धन के पीछे अपनी जान देते हैं!" माधव ने कहा।

इस पर भूतों ने बड़ों को खुश करने के लिए माधव के हाथ थोड़ा धन और दिया।

माधव की पत्नी उस धन को देख बोली—"ये भूत तो पागल मालूम होते हैं। अब उनसे थोड़ा धन और वसूल करके हमें सदा के लिए उनका पिंड छुड़ाना होगा! इस वास्ते तुम एक काम करो। भूतों से कह दो कि एक दिन रात को गाँववालों को चौपाल के यहाँ इकट्ठा करोगे, तब उनसे दोस्ती कर लें! अगर भूत इस बात को मान गये तो ऐसा करो!" यों समझाकर माधव की पत्नी ने उसे कोई योजना बताई।

माधव अपनी पत्नी की अक़्लमंदी पर मन ही मन खुश हुआ। उस दिन रात को भूतों के पास पहुँचकर बोला—"तुम लोगों की भेंट पाकर गाँव के सारे बड़े लोग फूले न समाये। मगर अंध विश्वास रखनेवाली कुछ औरतें संतुष्ट न हुईं, उन्हें भी खुश

करना जरूरी है!" यों समझाकर भूतों से माधव ने थोड़े रुपये और लिये और उन्हें बताया कि दूसरे दिन रात को वे चौपाल के पास पहुँचे।

दूसरे दिन सवेरे माधव ने गाँववालों को बताया—"आज रात को भूत चौपाल के पास दिखाई देंगे, जो लोग उन्हें खुद अपनी आँखों से देखना चाहते हैं, वे सब चौपाल के पास पहुँच जायें।"

गाँव के लोग कुतूहल में आकर जल्द ही खाना खाकर चौपाल के पास पहुँचे। माधव ने गाँववालों को समझाया—"हम सब एक ही गाँव के निवासी हैं, इसलिए मैं सच्ची बात बता देता हूँ। इधर कुछ दिन पहले मुझे अपने दूर के एक रिश्तेदार की काफी संपत्ति मिल गई है। उसमें से थोड़ा धन खर्च करके हमारे गाँव में मैं एक चिकित्सालय बनाना चाहता हूँ, जहाँ पर मुफ्त में दवाएँ दी जायेंगी, मगर रात को निद्रा के समय तीनों भूतों ने आकर मुझे जगाया और धमकी दी कि मैं चिकित्सालय न बनाऊँ। भूतों ने यह बात भी बताई कि इधर उनके लोक में पहुँचनेवालों की संख्या खूब घट गई है। कहते थे कि आज रात को हमारे गाँव आकर कुछ लोगों को वे अपने साथ ले जानेवाले हैं। आप सब लोग हिम्मत के साथ उन भूतों का सामना करके उन्हें भगा दीजिए!"

इसके बाद आध घड़ी के अन्दर तीन भूत बड़ी खुशी के साथ मुस्कुराते हुए

गाँव के लोगों के पास पहुँचे। उन्हें देखते ही कुछ लोग डर के मारे भाग गये, लेकिन कुछ साहसी लोगों ने हिम्मत करके उन पर जूते व पत्थर फेंकना शुरू किया।

तीनों भूतों ने बड़ी सहनशीलता के साथ हाथ जोड़कर निवेदन किया—"भाइयो, जल्दबाजी मत कीजियेगा! हम लोग यहाँ पर तुम्हें हानि पहुँचाने के लिए नहीं आये हैं, तुम से दोस्ती करने आये हैं!"

फिर भी लोग उन भूतों पर पत्थर व जूते बरसाने लगे। तब भूत निराश होकर वहाँ से चले गये। भूतों के थोड़ी दूर जाने पर माधव उनसे मिला और बोला—"देखते हो न? मनुष्य कैसे स्वार्थी होते हैं? उन्हें तो तुम लोगों का धन चाहिए, लेकिन वे तुम से दोस्ती करना तो नहीं चाहते। ये लोग भी कैसे विश्वासघाती हैं?"

इस पर भूतों ने बड़ी शांति के साथ कहा—"यह बात तुम मत भूलो कि तुम भी मनुष्य हो! हम इस बात को हमेशा के लिए याद रखेंगे।" यों कहकर भूत उसी वक़्त गायब हो गये।

"उफ़! पिंड छूट गया!" माधव के मुंह से निकल पड़ा, तब वह घर की ओर चल पड़ा।

घर पहुँचकर वह देखता क्या है कि उसका घर लूटा गया है। कल रात को उसने गाँववालों से कहा था कि उसे किसी रिश्तेदार की काफी संपत्ति मिल गई है, इस बात को चोरों ने सुन लिया। उसके घर में घुसकर उसकी पत्नी को खंभे से बांध दिया, तब भूतों से माधव को जो धन मिला था, उसके साथ माधव की गाढी कमाई को भी लूट ले गये।

माधव अपनी पत्नी के बंधन खोलते हुए पश्चात्ताप का अभिनय करते बोला—"चाहे मनुष्यों के साथ धोखा दे या भूतों के साथ! धोखा तो आखिर धोखा ही होता है! इसका प्रायश्चित्त करना ही पड़ेगा!"
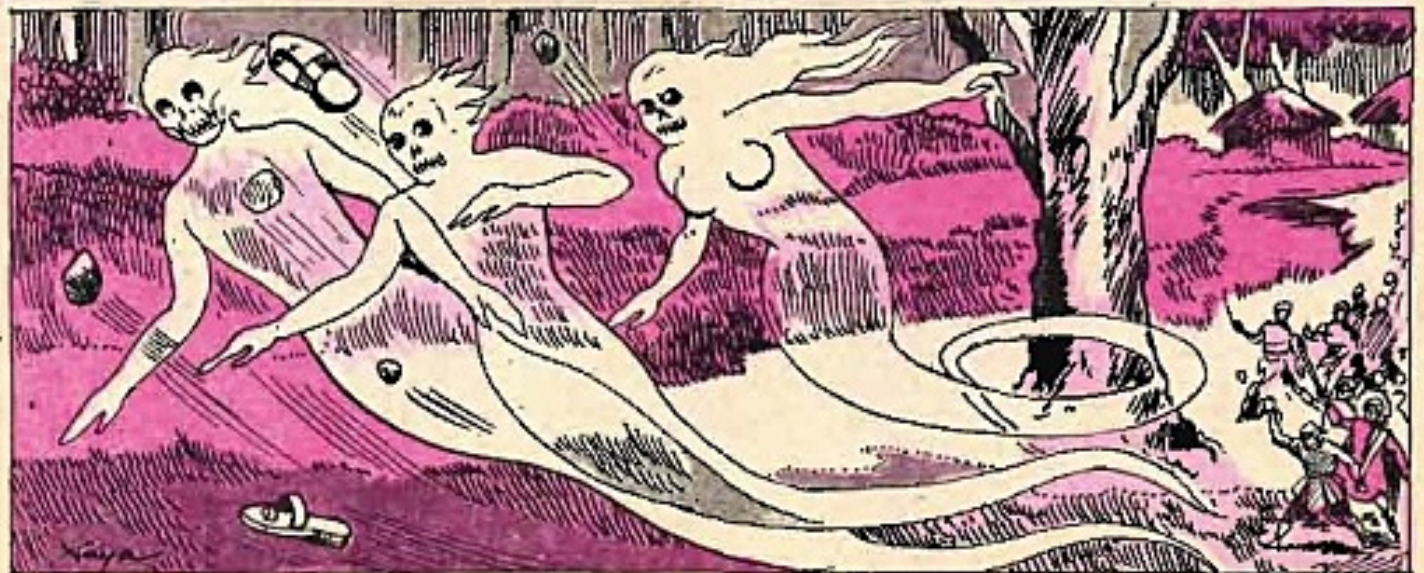
मंत्रीकी सूझ

सप्तगिरि और हिमगिरि राज्यों के बीच चिरकाल से मैत्री चली आ रही थी, लेकिन एक बार उन राज्यों की सीमा पर बसने वाले लोगों के बीच अचानक झगड़ा पैदा हुआ, जिस कारण दोनों राज्यों के बीच गहरी दुश्मनी पैदा हो गई और यातायात भी बंद हो गया।

सप्तगिरि पर अमरेन्द्र और हिमगिरि पर विजयंभूषण राज्य करते थे। इन दो राजाओं के बीच दुश्मनी की वजह से कर्पूर देश संकट में पड़ गया। उस देश पर राजा मणिकंठ का शासन था।

कर्पूर देश क्षेत्रफल की दृष्टि से सप्तगिरि तथा हिमगिरि के देशों से कहीं बड़ा था। सैनिक बल की दृष्टि से आस-पास का कोई भी देश कर्पूर देश की बराबरी नहीं कर सकता था। फिर भी राजा मणिकंठ इस बात के लिए बड़ा लोकप्रिय था कि वह दूसरे राज्यों को हड़पने का लोभ नहीं रखता है और साथ ही शांति चाहता है।

दूसरे देशों से कर्पूर देश का जो भी व्यापार होता था, वह सप्तगिरि तथा हिमगिरि राज्यों से होकर चलता था। अब उन राज्यों के बीच दुश्मनी के कारण उनका व्यापार ठप्प पड़ गया।

मणिकंठ ने इस हालत से अपने देश को बचाने के लिए खूब सोचा और विचारा। वैसे युद्ध करके उन दो राज्यों पर क़ब्जा करना चाहता था, फिर भी अकारण जनता का क्षय वह नहीं चाहता था।

इस हालत में मंत्री वीरसेन ने राजा को एक उपाय बताया और राजा ने उसे मान लिया। दूसरे ही दिन राजा मणिकंठ ने दूतों के द्वारा सप्तगिरि तथा हिमगिरि राजाओं के पास संदेशा पहुँचा। उस

विमला नारंग

संदेश का सारांश था कि कर्पूर देश अमुक दिन सप्तगिरि राज्य पर हमला करने जा रहा है और उस राज्य के हारते ही हिमगिरि पर हमला करने जा रहा है।

शांतिप्रेमी माने जाने वाले राजा मणिकंठ से यह संदेशा पाकर सप्तगिरि के राजा अमरेन्द्र तथा हिमगिरि राज्य का विजयभूषण आश्चर्य में आ गये। उन लोगों ने सोचा कि उन दोनों राज्यों के बीच की दुश्मनी को आसरा बनाकर मणिकंठ उन राज्यों पर अधिकार करने की बात सोच रहा है। फिर क्या था, तुरंत उन दोनों राज्यों के बीच समझौते चलने लगे। आखिर दोनों राजा इस निर्णय पर पहुँचे कि अगर वे दोनों एक साथ मिल जाय तो राजा मणिकंठ उन पर हमला करने की हिम्मत न करेगा। इसके बाद दोनों ने मणिकंठ का सामना करने के लिए युद्ध की तैयारी करना शुरू किया।

लड़ाई की तैयारियां होने के बाद दोनों राजाओं ने कर्पूर देश के राजा मणिकंठ के पास यह चेतावनी भेज दी कि सप्तगिरि तथा हिमगिरि पर कर्पूर देश का जो हमला होगा, उसे दोनों राज्य सहन न कर सकेंगे।

आखिर मणिकंठ के हमले का दिन आ पहुँचा। उस दिन कर्पूर देश की सेना ने अपनी सीमा पार नहीं की, साथ ही अमरेन्द्र और विजयभूषण ने अपने दूतों के द्वारा यह समाचार जान लिया कि वास्तव में कर्पूर देश के अन्दर लड़ाई की तैयारियाँ तक नहीं हुई हैं। वे दोनों राजा आश्चर्य में आ गये और इस निर्णय पर पहुँचे कि उन दोनों राज्यों के बीच मैत्री की वजह से मणिकंठ उन पर हमला करने की हिम्मत नहीं कर पाये हैं। इस तरह मणिकंठ की युद्ध की घोषणा सप्तगिरि तथा हिमगिरि के बीच स्थाई मैत्री का कारण बन गई।

इस प्रकार कर्पूर देश के मंत्री की योजना के द्वारा दो शत्रु राज्यों के बीच न केवल शाश्वत रूप से मैत्री स्थापित हुई, बल्कि उन देशों से होकर कर्पूर देश की व्यापार की समस्या भी हल हो गई।
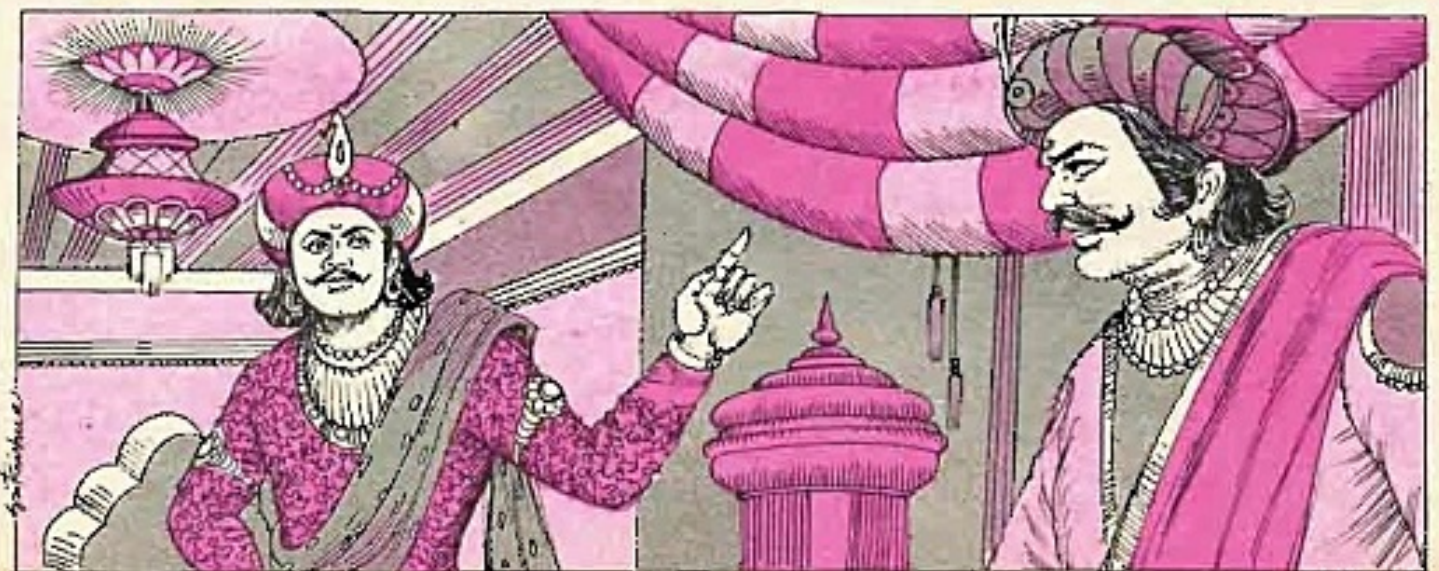
गंगा तथा पार्वती के बीच ईर्ष्या बढ़ती गई, इस बीच गंगा का मेला पड़ा।

नारद मुनि ने पार्वतीजी से कहा– "तीन करोड़ देवता इस मेले के अवसर पर गंगा में स्नान कर रहे हैं जिसकी वजह से उनकी महिमाएँ गंगाजी को प्राप्त होने वाली हैं। इसलिए माता गौरीजी, आप भी ऐसे ही करेंगी तो सारा जगत यह कह कर आपकी प्रशंसा करेगा कि आप अत्यंत विशाल हृदया और दयालू हैं!" इसके बाद गंगाजी के पास जाकर बोले–"गंगा भवानीजी, आप को पवित्र बनाने के लिए पार्वतीजी पधार रही हैं।"

"ऐसी बात है। अपनी दयालुता का परिचय देने आ रही है, आने दीजिए, मैं उसे समझाऊँगी!" गंगा बोलीं। इसके बाद पार्वती फूल झिड़ककर गंगाजी में उतरने को हुई, तब गंगाजी कड़ककर बोलीं– "रुक जाओ! मुझे गंदा न बनाओ।" यों पार्वती को गंगा ने रोका। इस पर दोनों के बीच बड़ा विवादपूर्ण संवाद चला।

"सुनो, कुमारस्वामी को शरवण सरोवर ने जन्म दिया है! तुम्हारे लूले हाथों में दबकर गुड़िया बाला शिशु बेचारा गजमुख बन गया है। तुम तो निपूती हो!" गंगा ने परिहास किया।

"जानती हो, मैं कौन हूँ? परमशिव की अर्द्धांगिनी हूँ!" पार्वती बोलीं।

"क्यों नहीं जानती? विवाह करने वाले भोले पति को आधा खा जाने वाली

१०. गोदावरी का जन्म

परम पातकी हो न!" गंगा ने मजाक उड़ाया।

"हाँ, तुम तो फिसलकर गिर गई भ्रष्टा हो!" पार्वती ने व्यंग्य कसा।

"हाँ, हाँ, यह बात सारा जगत जानता है कि जब शिवजी के कंठ में हालाहल अपने ताप का प्रकोप दिखा रहा था, तब मैंने उसे शीतल बनाया। इस पर उन्होंने अपने सर पर मुझे धारण किया, इसलिए सब को विदित है कि मैं उनके अनुराग का पात्र हूँ या भ्रष्टा हूँ!" गंगा ने समझाया।

"किसी के पुकारने पर तुम चल पड़ी और उनके सर पर फँस गई अनाथा हो! पार्वती ने परिहास किया।

"तुम प्राणियों की बलि चाहने वाली निर्दयी माता हो! वामाचारिणी हो! अछूत मातंगिनी हो और कर्कश हृदया शक्ति हो!" गंगा ने मजाक किया।

"गंगे, तुमने खूब याद दिलाया। हाँ, मैं शक्ति हूँ। महाशक्ति हूँ।" यों कहते पार्वती आवेश में आ गई। इस पर प्रलय कालीन प्रभंजन बहने लगा। सारी दिशाओं में अंधकार फैल गया। बिजलियाँ गिरने लगीं। मेघ गरजने लगे। पृथ्वी कांप उठी। बर्फ की चोटियाँ गलने लगीं। सारी प्रकृति में हलचल मच गई।

पार्वती के आवेश को देख गंगा बोली—"तुम मुझे शीतल व शांत समझकर नीचा दिखा रही हो। पर यह बात भूल गई हो कि मैं जल शक्ति हूँ। मुझे भड़काने का पाप तुम्हारे ही सिर पर लगेगा।" ये शब्द कहते गंगानदी ने भीषण बाढ़ के साथ सारे उत्तर भारत को जलमय बनाया।

देवता आसमान से इस वीभत्स को देख सोचने लगे कि माताओं के आपस के झगड़े ने प्रलय मचा दिया है।" इसके बाद वे कलहकर्ता नारदमुनि की निंदा करने लगे।

उस समय विघ्नेश्वर दक्षिण से लौटते हुए नारद को देख बोले—"कलह भोज! आपने कैसा बड़ा उपद्रव खड़ा किया है?" इस पर नारद बोले—"ऐसे उपद्रव के वक़्त

ही तो पता चलता है कि जगत के कल्याण के हेतु श्रम उठाने वाला कौन है ? यों परिहास करते नारद चले गये, तब विघ्नेश्वर कैलास पहुँचे ।

कैलास में पार्वतीजी पछताते हुए मन ही मन सोचने लगी–"फ़िर से एक भगीरथ जन्म लेकर गंगा को ले जा जाय, तब तक गंगा का यह उत्पात कम न होगा ।"

ये बातें विघ्नेश्वर ने सुन लीं; पर भोले बनकर वे पार्वती के चरणों में प्रणाम करके बोले–"माताजी, मैं एक पुण्य का कार्य करना चाहता हूँ, मुझे आशीर्वाद दीजिए ।"

"विघ्नेश्वर के संकल्प करने से उस काम को रोकने वाला कौन है, बेटा ? लगता है कि तुम दक्षिण हो आये हो, बात क्या है ?" पार्वती ने पूछा ।

"माताजी, विन्ध्याचल के दक्षिण में सारी जमीन सूखी पड़ी है ! वह सारा प्रदेश सस्य श्यामल बन जाय और आप अन्नपूर्णा का नाम सार्थक बना ले, गंगामाता उधर अपनी कृपा दृष्टि डाल दे तो क्या ही अच्छा होगा !" विघ्नेश्वर ने कहा ।

"मैं क्या कहूँ ! यह सब विश्वनाथ की कृपा है !" पार्वती बोली ।

"यों सोचकर हम चुप देखते नहीं रह सकते हैं न ! इसमें हमारा भी तो प्रयत्न होना चाहिए !" विघ्नेश्वर ने कहा ।

"ज़रूर होना चाहिए, तिस पर तुम जैसा व्यक्ति इसमें सहयोग दे तो वह कार्य ज़रूर सफल हो सकता है !"

"बस, माताजी ! मैं आपके मुँह से यही बात सुनना चाहता था ! अब मुझे आज्ञा दीजिए !" यों कहकर पार्वती के चरणों का स्पर्श करके विघ्नेश्वर सीधे महर्षि गौतम के आश्रम की ओर चल पड़े ।

गौतम मुनि पश्चिमी पहाड़ियों के बीच आश्रम बनाकर खेती कर रहे थे । विघ्नेश्वर गाभिन गाय के रूप में बदल गये !

फसल को कुचलने वाली गाय को भगाने के ख्याल से गौतम ने अपने कमंडलु के जल को हथेली में लेकर फेंक दिया । पानी की

बूंदों के गिरते ही गाय नीचे गिरकर बेहोश हो गई। इस पर गौतम ने अपनी तपस्या और पुण्य को भी समर्पित किया, फिर भी मायावी गाय ने अपनी आँख न खोली। इस पर नारद ने इन्द्र को उकसाया। इन्द्र पहले से ही गौतम से नाराज़ थे। ब्रह्मदेव ने एक अपूर्व सुंदरी के रूप में अहल्या की सृष्टि की। इन्द्र उसके प्रति आकृष्ट हुए। कई लोग अहल्या को पाने के लिए होड़ करने लगे। इस पर ब्रह्मदेव ने शर्त रखी कि जो व्यक्ति सब से पहले भूदेवी की प्रदक्षिणा करके लौटेगा, अहल्या उसकी हो जाएगी।

गौतम मुनि प्रसव करने वाली गाय की प्रदक्षिणा करके लौटे, ब्रह्मा से तर्क करके उन्हें मनाया और अहल्या को जीत लिया। गौतम ने कहा था कि गाय साक्षात् भूदेवी के समान है। पर अब उन्हीं के हाथों से गोहत्या हो गई है, इन्द्र को अब गौतम के साथ बदला लेने का अच्छा मौका मिला। इस पर उन्होंने एक ऋषि का वेष धारण कर सारे लोकों में भ्रमण करते हुए प्रचार करना प्रारंभ किया– "गौतम मुनि गोहत्या करने वाले महान् पापी हैं। उस पाप के कारण उनका आश्रम अपवित्र हो गया है। इसलिए कोई भी अगर गौतम को देखें या उनके आश्रम में क़दम रखें तो उन्हें वह पाप लग जाएगा। इस पाप का परिहार करने के लिए गंगा जल उस आश्रम में गाय पर प्रवाहित होना चाहिए, इसके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं है।" इस तरह इन्द्र ने सारे मुनियों को भड़काया, इस पर सब मुनियों ने उनका बहिष्कार किया और सारे आश्रमवासी वहाँ से चले गये।

कहाँ की गंगा! और कहाँ की पश्चिमी पहाड़ियाँ! फिर भी गौतम मुनि ने भगीरथ को आदर्श बनाकर हिमालयों में बैठे गंगा के प्रति घोर तपस्या की।

कपिल महामुनि की क्रोधाग्नि में भस्म हुए अपने दादा-परदादाओं का उद्धार करने के लिए एक जमाने में भगीरथ ने देव गंगा
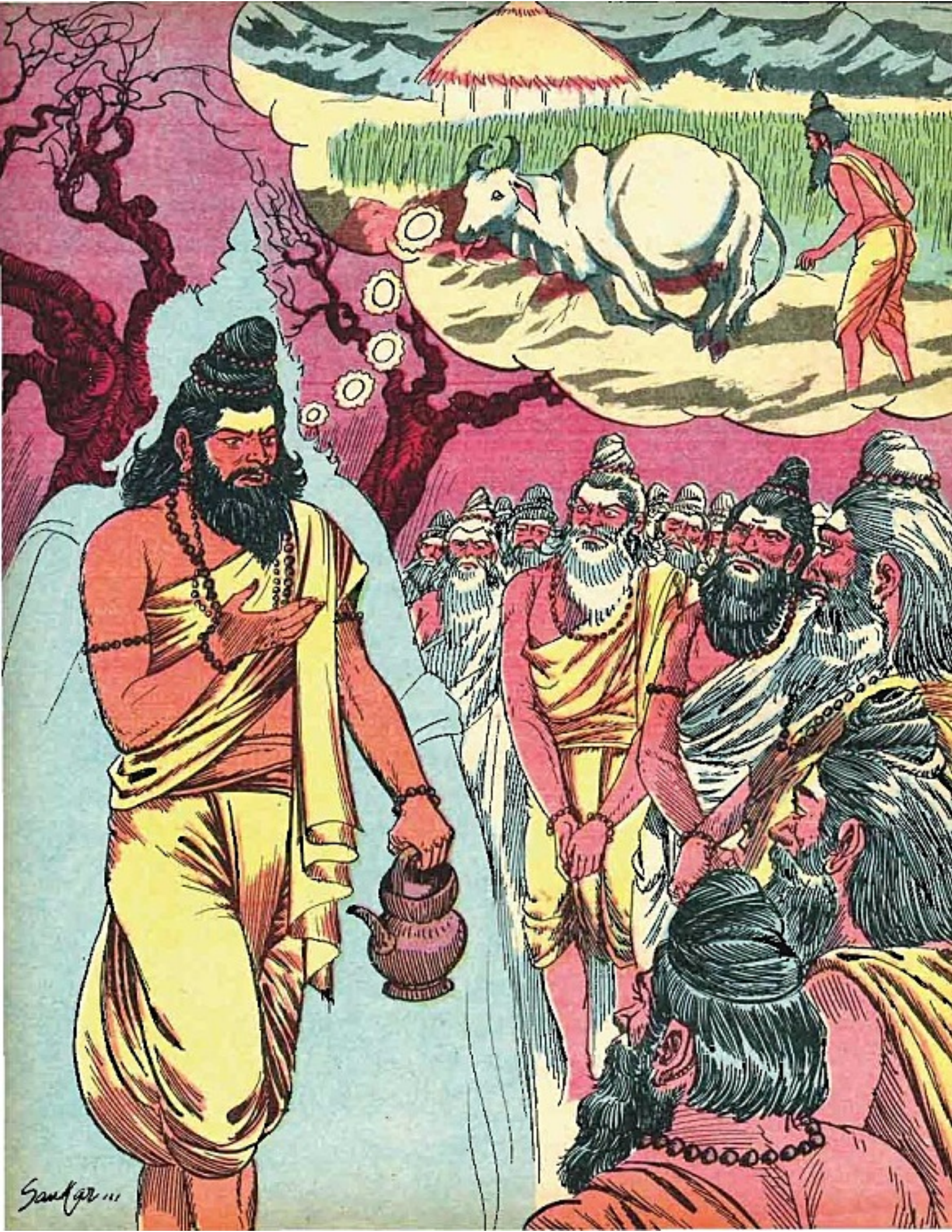
के प्रति तपस्या करके उन्हें प्रसन्न बनाया था। उन्हें आसमान से पृथ्वी पर लाये। शिवजी ने अपने जटा-जूटों में गंगा को धारण कर लिया। इस पर गंगा गंगा-भवानी कहलाई। भगीरथ ने गंगाजी को छोड़ने के लिए शिवजी से प्रार्थना की। शिवजी ने जटाओं की गांठ को थोड़ा ढीला करके गंगा की छोटी सी धारा को छोड़ दिया। इस पर बड़ी तेज गति के साथ गंगा छितर कर हिमालयों के चारों तरफ़ गिर गई। इसके बाद गंगा प्रवाह का रूप धारण कर भगीरथ के साथ पूर्वी दिशा में चल पड़ी। इसी वजह से गंगा का नाम भागीरथी पड़ गया।

हिमालयों में गिरी गंगा की एक धारा हिन्दूकुश पर्वतों से होकर पश्चिमी दिशा में बहकर इन्दु नदी कहलाई। बाद को लोगों ने इंदु नदी को सिंधु नदी पुकारा। भारत के पश्चिमोत्तर सीमा पर प्रवहित होने वाली सिंधु नदी के कारण ही भारतवर्ष हिन्दू देश कहलाया।

गंगा जब भगीरथ के पीछे तेज गति के साथ बहती जा रही थी, तब जह्नु महा मुनि ने उस धारा की वजह से अपने आश्रम के नष्ट होते बचाने के लिए गंगा को पी लिया। इस पर भगीरथ ने जह्नु मुनि से प्रार्थना करके गंगा को मुक्त कराया। तब जह्नु मुनि के कान से गंगा बाहर निकली, इस कारण गंगा का नाम जाह्नवी पड़ गया। इसके बाद कपिलाश्रम में पहुंचकर भगीरथ ने गंगा को अपने पूर्वजों के ऊपर से बहने दिया, इस तरह उन्हें शाप से मुक्त कराया। तब जाकर भगीरथ का प्रयत्न सफल हो गया।

गंगाजी गौतम की तपस्या पर प्रसन्न हुई और तब उनके पीछे चल पड़ी। रास्ते में गंगादेवी के पद-चिह्नों पर कई नहरें, नाले व छोटे-मोटे पहाड़ी झरने पैदा हुए।

गौतम के आश्रम में पहुँचते ही गंगा ने एक प्रवाह का रूप धारण कर लिया। गौतम रास्ता दिखाते आगे बढ़ रहे थे,

गंगा गाय पर से प्रवहित होकर गौतमी कहलाई। इस पर मायावी गाय झट से उठ खड़ी हो गई, चार क़दम चलकर ऊपर उड़ी और आसमान में अदृश्य हो गई, तब विघ्नेश्वर का साक्षात्कार हुआ।

विघ्नेश्वर ने गंगाजी को प्रणाम करके कहा–"माताजी, अपने इस पुत्र को क्षमा कीजिए! मैंने इसलिए यह काम किया है कि आपकी दया रूपी अमृत जल धारा से विन्ध्याचल के नीचे की सारी भूमि सस्य श्यामल बन जाय! आपने दक्षिण गंगा के रूप में अवतरित होकर गाय को बचा लिया, इस कारण आप गोदावरी नाम से प्रसिद्ध होंगी!" यों गंगाजी की स्तुति करके विघ्नेश्वर अदृश्य हो गये।

गोदावरी ने अनेक उप नदियों के साथ पूर्वी दिशा में बहकर पूर्वी मैदानों को सस्य श्यामल बना दिया। सप्त ऋषि तथा देवताओं ने गोदावरी में स्नान किये। इसके बाद गौतम की प्रशंसा करके उन्हें अपर भगीरथ बताया। इसके बाद गोदावरी सात शाखाओं में बंटकर सप्त गोदावरी नाम से पूर्वी समुद्र में जा मिली।

गंगा जब गोदावरी धारा के रूप में बदल रही थी, तब उसकी श्यामल वेणी फैलकर पश्चिमी घाटियों में फँस गई। इस पर विष्णु ने अपने हाथ की उंगलियों

द्वारा वेणी की उलझन को खोल दिया। कृष्णवर्णाधारी विष्णु की उंगलियों के बीच से वेणी की धारा फिसलकर वह कृष्णवेणी कृष्णा नदी कहलाते एक और बड़ी नदी के रूप में प्रवहित हुई।

इसी तरह गंगाजल ने आसमान में उछल कर दक्षिण में स्थित कवेर महामुनि के आश्रम में उनके कमण्डलू में गिरकर एक कन्या का रूप धारण कर लिया, तब अगस्त्य के पीछे जंगलों में विहार करते कावेरी नदी का रूप धरकर सुंदर जल-प्रपातों के द्वारा दक्षिण देश में प्रवहित हुई।

इस प्रकार गौतम महर्षि द्वारा लाई गई गंगा ने तीन और बड़ी नदियों का रूप

धारण किया और दक्षिण भारत को समृद्ध बनाया। इसी कारण गंगा गोदावरी, कृष्णा व कावेरी कहलाई गई।

गंगा के आने से गौतम ऋषि का आश्रम फिर से शोभायमान हो उठा। गोदावरी के तट पर अनेक पुण्य तीर्थ स्थापित हुए। साथ ही गौतम का यश चारों तरफ़ व्याप्त हो गया। गंगा का पश्चिमी घाटियों में प्रवहित होना असंभव था, इसीलिए इन्द्र ने गौतम को यह प्रायश्चित बताया था, लेकिन असंभव को संभव बनाने वाले गौतम से क्षमा मांग ली।

इस पर भी गौतम को संतोष न हुआ, क्योंकि इसके पूर्व इंद्र के धोखे की वजह से नाराज हो गौतम ने अहल्या को एक शिला का रूप धरकर पड़ी रहने का शाप दिया था, तब वे विन्ध्याचल को पारकर पश्चिमी घाटियों में अपना आश्रम बनाकर तपस्या करने लगे थे। पर गोदावरी के उद्भव से पश्चिमी घाटियों में अनेक मुनियों के आश्रम स्थापित हुए। अत्रि महामुनि त्रिमूर्ति के अंश से पुत्रवान हुए। अनसूया अतिथियों को अन्नदान करने लगी। फसल बहुतायत से होने लगी।

गौतम के आश्रम के चारों तरफ़ फसल समृद्ध थी, मगर अहल्या का अभाव उन्हें खटकने लगा। जल्दबाजी में आकर अहल्या को शाप देने के उपलक्ष्य में गौतम पछताने लगे, ऐसी हालत में विघ्नेश्वर ने दर्शन देकर कहा–"हे गौतम महर्षि! शीघ्र ही विष्णु रामचन्द्रजी का अवतार लेकर अपने चरण का स्पर्श कराकर शिला रूप में स्थित आप की पत्नी को पुन: मानव रूप-धारिणी बनाने वाले हैं! इसलिए वह पाषाण पुनीत हो जाएगी! गोदावरी का जन्म देने के लिए मैंने आप को बड़ा कष्ट दिया है। आज से गोदावरी के लिए गौतमी नाम शाश्वत हो जाएगा।"

गौतम मुनि प्रसन्न हो बोले–"विघ्नेश्वर! यह सब आपके संकल्प बल का फल है। गोदावरी जल तथा विघ्नेश्वर की कृपा सदा-सर्वदा हमारी रक्षा करते होंगे!"
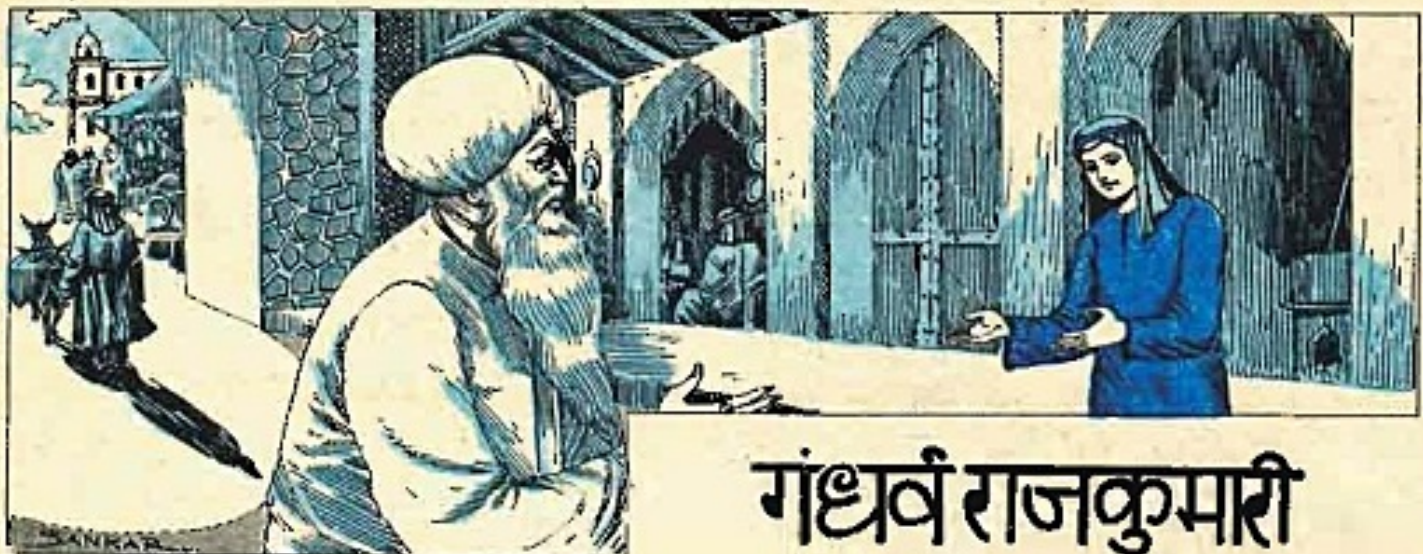
गंधर्व राजकुमारी

पुराने जमाने में बस्रा नामक शहर में हसन नाम का एक जवान रहा करता था। हसन का मतलब खूबसूरत होता है। यह नाम उसके प्रति सार्थक कहा जा सकता है। क्योंकि उस जमाने में बस्रा शहर में हसन जैसा खूबसूरत जवान दूसरा न था। वह अपने माँ-बाप का इकलौता बेटा था, इसलिए उसे बड़े ही लाड़-प्यार में पाला गया। साथ ही उसके बचपन में ही उसका बाप मर गया था। बाप की जो कमाई थी, उसे हसन ने अपने दोस्तों को दावतें खिलाने में उड़ा दी।

इसके बाद हसन की माँ ने अपने धन से एक मशहूर बाजार में गहने गढ़ने की बड़ी दूकान खरीद कर दी। वह रोज उस दूकान में बैठकर सोने के गहने बनाता था। उसकी खूबसूरती रास्ते चलने वाले सबको अपनी ओर खींच लेती थी।

एक दिन हसन अपनी दूकान में बैठे काम कर रहा था। उस वक़्त फारस देश का एक बूढ़ा आदमी सफ़ेद पगड़ी धारणकर उस रास्ते से गुजारा। उसके लंबी व सफ़ेद दाढ़ी थी। वह हसन को देख ठिठक कर रुक गया। देखने में वह बुजुर्ग जैसा मालूम हो रहा था।

इतने में दुपहर के नमाज का वक़्त हो गया। सारी गलियाँ सुनसान हो गईं। बूढ़े ने हसन की दूकान में प्रवेशकर उसे सलाम किया। हसन ने उसे सलाम का जवाब देकर बैठने की मिन्नत की।

बूढ़े ने बैठकर मुस्कुराते हुए कहा–"बेटा, मेरे कोई संतान नहीं है। तुम्हें देखने पर मेरे मन में यह इच्छा जगी कि मैं तुम्हें पालकर अपनी हुनर सिखला दूँ! इस तरह तुम गहने गढ़कर मेहनत करके अपनी खूबसूरती और तंदरुस्ती

को क्यों बिगाड़ बैठते हो? मेरी विद्या ऐसी असाधारण है जिसे पाने के लिए हजारों आदमियों ने अपनी जान गँवा दी है। जब तक तुमको इस दूकान में मैंने न देखा, तब तक किसी दूसरे को मेरी यह विद्या सिखलाने का ख्याल तक न था।"

हसन ने बड़ी जल्दबाजी में आकर पूछा—"अच्छी बात है! आप मुझे पाल कर अपनी विद्या सिखाइये।"

"कल!" इतना कहकर फारस का वह बूढ़ा वहाँ से चला गया।

उस खुशी में हसन अपनी दूकान बंद करके अपनी माँ के पास दौड़कर पहुँचा, और उसे यह खबर सुनाई।

हसन की माँ ने समझाया—"बेटा, फारस के नास्तिकों की बात पर भी कहीं यक़ीन किया जा सकता है? वे तो अग्नि की पूजा करते हैं? वे सिर्फ़ सोना बनाने की विद्या जानते हैं। मगर उनके साथ दोस्ती करने वाला कोई भी आदमी सुधर नहीं सकता; बल्कि विनाश को प्राप्त हो जाते हैं।"

इस पर हसन लापरवाही से हँसकर बोला—"माँ, हम तो गरीब हैं! हम से कोई भी कुछ लूट नहीं सकता। वह बूढ़ा बड़ा ही क़ाबिल आदमी मालूम होता है। हम पर उनकी मेहर्बानी होने पर हमारी भलाई ही हो सकती है!"

हसन की माँ इसका कोई जवाब दे न पाई, वह चुप रही। इस खुशी में हसन रात को सो न पाया। दूसरे दिन नींद से जागते ही वह अपनी दूकान में पहुँचा। थोड़ी ही देर में फारस का निवासी आ पहुँचा। उसने हसन के साथ गले लगकर पूछा—"बेटा, क्या तुम्हारी शादी हो गई है?"

"नहीं, मेरी माँ कई दिनों से जल्दी मचा रही है कि मैं शादी कर लूँ!" हसन ने कहा।

"शाबाश! मैं अपनी विद्या ब्रह्मचारियों को ही सिखाता हूँ! अच्छी बात है,

क्या तुम्हारे पास कहीं पुराना तांबा है?" बूढ़े ने कहा।

हसन ने टूटी हुई तांबे की थाली लाकर बूढ़े के सामने रखी।

"हाँ, हाँ, मैं यही चाहता था। तुम इस तांबे के टुकड़े करके उन्हें साँचे में ढालकर भाती में गला दो।" बूढ़े ने आदेश दिया।

हसन ने जल्द ही उस पुराने तांबे को गलाया। तब बूढ़ा उठकर उसके नजदीक आया और बोला–"हक्! मक्! बक्! यह तांबा सोना हो जाय!" यों तीन बार कहकर पगड़ी की तहों से एक पुड़िया निकाली, उसमें से लाल चूर्ण निकालकर सांचे में डाल दिया। दूसरे ही क्षण तांबे का पानी घनीभूत हो सोने का टुकड़ा बन गया।

उसे देख हसन चकित रह गया। इसके बाद वृद्ध के आदेशानुसार हसन ने उस टुकड़े को कसौटी पर कसकर देखा, तब वह खरा सोना साबित हुआ। जौहरी उस सोने का अच्छा दाम देगा।

इसके बाद बूढ़े ने हसन को सलाह दी– "तुम उसे ले जाकर बाजार में बेचकर धन लेते आओ। मगर किसी से यह मत बताओ कि तुम्हें यह सोना कैसे मिला है।"

हसन ने वह सोना दो हज़ार दीनारों में बेच डाला, वह धन अपनी माँ को दिखाकर समझाया कि यह सब फारस के उस बुजुर्ग की मेहर्बानी है। मगर

ही दिन में तुम्हें इतना सारा सोना कैसे मिल गया है? ऐसी हालत में तुम्हारा यह रहस्य कैसे छिप सकता है?"

"यह बात तो सच है! मगर मैं आपकी यह विद्या जल्दी-जल्दी सीखना चाहता हूँ।" हसन ने जवाब दिया।

बूढ़ा जोर से हँस पड़ा, तब बोला– "क्या तुम यह समझते हो कि यह विद्या सरे बाजार में सीखी जा सकती है! सचमुच तुम यह विद्या सीखने की इच्छा रखते हो तो अपने औजारों के साथ मेरे घर चले आओ।"

इस पर हसन बूढ़े के पीछे चल पड़ा, मगर रास्ते में चलते वक़्त उसे फारस के नास्तिकों के बारे में उसकी माँ ने जो चेतावनी दी थी, वह याद हो आई। वह अचानक रुका और सोच में पड़ गया, बूढ़े ने उसके मन की बात भांप ली।

उसने कहा–"बेटा, तुम्हारे मन में कोई संदेह घर कर गया है। इस स्पर्शवेदी विद्या को तुम्हें अगर मेरे घर पर सीखने में एतराज हो तो मैं तुम्हारे ही घर चलकर सिखा सकता हूँ।"

हसन ने यह सोचकर बूढ़े की बात मान ली, ऐसा करने पर उसकी माँ भी डरेगी नहीं। तब वे दोनों हसन के घर पहुँचे। बूढ़े को बाहर बरामदे में बिठाकर हसन

हसन की माँ की शंका दूर न हुई। फिर भी हसन अपनी माँ की शंका की परवाह किये बिना रसोई घर से पीतल की बड़ी सामग्री लेकर दूकान की ओर दौड़ पड़ा।

बूढ़ा अभी तक दूकान में बैठा हुआ था। हसन उस भारी पीतल की सामग्री को एक तरफ़ रखकर धौंकनी से आग सुलगाने लगा। इसे देख बूढ़े ने पूछा– "बेटा, तुम यह क्या कर रहे हो?"

"हम इसे भी सोने में बदल डालेंगे।" हसन ने जवाब दिया।

बूढ़े ने हँसकर पूछा–"क्या सब लोग तुम पर संदेह न करेंगे कि अचानक एक

अन्दर चला गया और बोला–"माँ, वह बुज़ुर्ग हमारे घर मेहमान बनकर आये हैं। एक बार अगर वे हमारा नमक खाते हैं तो फिर वह हमारे प्रति दगा न देंगे।"

"बेटा, यह ईमानदारी हम्हीं लोगों तक सीमित है! लेकिन आग की उपासना करने वाले नास्तिकों में नहीं होती! मगर तुम यह मत सोचो कि तुम्हारी हिफ़ाजत को लेकर मैं बेफ़िक्र हूँ। तुम अपने साथ एक मेहमान को लाये हो, इसलिए मैं रसोई बनाकर खिलाती हूँ। मगर वह आदमी अन्दर आया तो मैं अपने घर में रह नहीं सकती। पड़ोस में जाऊँगी और उसके लौटने के बाद ही अपने घर में क़दम रखूँगी।" हसन की माँ ने समझाया।

इसके बाद वह तरह-तरह की तरकारियाँ खरीद लाई, रसोई बनाकर पड़ोसी के घर चली गई। इस पर हसन बूढ़े को अन्दर बुला लाया और बोला–"मेरे घर में आपके भोजन करने के बाद हम दोनों के बीच रिश्तेदारी क़ायम होगी!"

"हाँ, रिश्तेदारी का यह एक पाक बंधन है। तुम्हारे प्रति अगर मेरे दिल में गहरा प्यार न होता तो क्या तुम्हें मैं यह अनोखी विद्या सिखला देता?" यों कहकर बूढ़े ने अपनी पगड़ी में से एक पुड़िया निकाली और समझाया–"देखो, इस चूर्ण के जरिये तुम कई मन सोना बना सकते हो। इसमें एक हज़ार जड़ी बूटियाँ और एक हज़ार तरह-तरह की चीज़ें मिलाकर बड़ी मेहनत के साथ मैंने यह चूर्ण तैयार किया है। मैं इसे बनाने का पूरा तरीक़ा सिखला दूँगा।" यों कहकर बूढ़े ने वह पुड़िया हसन के हाथ दे दी।

हसन जब विस्मय के साथ उस पुड़िया को देख रहा था, तब बूढ़े ने हसन की थाली में थोड़ा खाना परोसा और उसमें नशीली दवा मिलाकर कहा–"बेटा तुम यह खाना खा लो।"

हसन ने ज्यों ही एक कौर मुँह में डाल लिया, त्यों ही वह बेहोश हो गिर पड़ा।

(और है)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जनवरी १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

Ravindra S. Kamboj

★

M. Natarajan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ नवम्बर १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

सितम्बर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : जीवन की है ढलती शाम!

द्वितीय फोटो : अभी बहुत करना है काम!!

प्रेषक : पंकज-कुमार शर्मा, सी-२४, भगवानदास रोड, सी-स्कीम, जयपुर-३०२००१

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

पारले पॉपिन्स. पहले रूपहली धारियाँ देख लो, फिर रसीले स्वाद का मज़ा लो.
अब नक्कालों की चाल नहीं चलेगी.